चौखम्बा अमरभारती ग्रन्थमाला

३१

॥ श्रीः ॥

जातकालङ्कारः

सयुक्तिक-सोदाहरण-'तत्त्वप्रकाशिका'

सस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतः

चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी

৪০৭-৩

चौखम्बा अमरभारती ग्रन्थमाला
३१

श्रीगणेशदैवज्ञविरचितः

जातकालङ्कारः

सयुक्तिक-सोदाहरण 'तत्त्वप्रकाशिका' संस्कृत-
हिन्दीव्याख्याद्वयोपेतः

व्याख्याकारः
गणित-फलित-ज्यौतिषाचार्य-ज्यौतिषतीर्थ-साहित्यवेदान्ताचार्य-सांख्ययोगशास्त्री
आचार्यः श्री पं० लषणलाल झा
वैद्यनाथधामस्थ-वैद्यनाथ-कमलकुमारीसंस्कृतविद्यालयप्रधानाध्यापकः

चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन
वाराणसी
१९७९

प्रकाशक : चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०३५
मूल्य : ४–००

© चौ ख म्बा अ म र भा र ती प्र का श न
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० १३८, वाराणसी–२२१००१
(भारत)

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० ८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ६३१४५

CHAUKHAMBA AMARABHARATI GRANTHAMALA
31

JĀTAKĀLAṄKĀRA

(Astrological calculations of a nativity)

OF

GAṆEŚA DAIVAJÑA

With 'Tatvaprakashika' Sanskrit & Hindi Commentaries

BY

Pt. LAṢAṆALAL JHA
Jyotisa–Sahitya–Vedantacharya

GHAUKHAMBA AMARABHARATI PRAKASHAN

VARANASI–221001
1979

© Chaukhamba Amarabharati Prakashan
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Post Box 138, Varanasi–221001
(INDIA)

First Edition
1979
Price Rs. 4–00

Also can be had from
Chowkhamba Sanskrit Series Office
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Post Box 8, Varanasi–221001 (India)
Phone : 63145

आमुख

श्री सच्चिदानन्दकन्द परमात्मा के निःश्वासभूत वेदभगवान् का प्रधान अङ्ग नेत्ररूप त्रिस्कन्ध ज्योतिपशास्त्रान्तर्गत होरास्कन्ध का एक विभाग जातक शास्त्र हैं। उसमें मुनिप्रणीत अनेक जातक ग्रन्थ हैं। जातक ग्रन्थ द्वारा जन्म-पत्र का फलादेश होता है। सांसारिक प्रत्येक जीव के त्रैकालिक शुभाशुभ फला-देश उनके जन्मकालीन ग्रहस्थितिवश होते हैं, अतः ग्रह का अर्थ—पूर्व जन्म कृत कर्मानुसार शुभाशुभ फल प्रदानार्थं जीवों को जो पकड़े वह ग्रह है, ऐसा किया गया है। जातक शास्त्र के प्रयोजन में कहा गया हैं—

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः प्राप्तिम् ।
व्यञ्जयति क्षास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव ॥

जातक शास्त्र में श्री शुकमुनि विरचित सूत्रात्मक सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ 'शुकजातक' है, उस के आधार पर १५३५ शाके में श्री गणेश दैवज्ञभूपण ने पद्यमय "जातकालङ्कार" नामक ग्रन्थ बनाया। जन्मपत्र के फलादेश में यह एक अद्‌भुत चमत्कारी ग्रन्थ है। इसमें एक व्यक्ति के जन्मपत्र द्वारा उसके सम्वन्धियों के फलादेश करने की विधि जो वतायो गयी है वह इसकी विशेपता हैं। योग के अनुसार प्रत्येक भावफल एवं आयु के विचार प्रसंशनीय है। छोटा ग्रन्थ होने पर भी गागर से सागर के समान यह सभी विषयों से परिपूर्ण है। इस हेतु एकमात्र इस ग्रन्थ के अध्ययन से लोग ज्योतिषी हो जाते हैं। भारत में सर्वत्र इसकी मान्यता हैं, फलित ज्योतिष की परीक्षा में भी यह ग्रन्थ निर्धारित है। ग्रन्थकार की रत्ननाशैली अन्यन्त सुन्दर और सुवोघ है। इसमें संज्ञाध्याय, भावाध्याय, योगाध्याय, विषकन्याध्याय, आयुर्दायाध्याय, व्यत्यस्थभावफलाध्याय और वंशाध्याय के भेद से सात अध्याय हैं।

जातकालङ्कार पर पं० हरभानु की संस्कृत टीका रहने पर भी गुप्त रहस्य को स्पष्ट करने वाली एक सरल संस्कृत-हिन्दी टीका की आवश्यकता प्रतीत हुई, अतः 'चौखम्बा अमर भारती ग्रन्थमाला' के संचालक महोदय की प्रेरणा से मैंने युक्ति एवं उदाहरण के साथ संस्कृत-हिन्दी टीका लिखकर प्रकाशनार्थ उन्ही को समर्पित किया हूँ। मुझे अनेक स्थल में प्राचीन टीका की विवेचना करनी पड़ी है, जहाँ युक्तिसंगत अर्थ नहीं है। यत्र तत्र विशेष में फलादेशोप-युक्त अनेक योग दिये गये हैं। धन, सन्तान, जाया, भाग्य एवं कर्म पर विशेष विचार किये गये हैं।

आशा है इस टीका के आश्रय से साधारण जन भी जन्मपत्र के फलादेश में प्रवीण हो जायगें। यदि विद्वानों को इससे कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपना श्रम सफल समझूँगा।

अन्त में पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि भ्रम होना स्वाभाविक है। अतः जो त्रुटि हुई हो उसे क्षमा करते हुये हंसक्षीरन्याय के समान सार वस्तु ग्रहण करने की कृपा करेंगे।

वसन्त पञ्चमी
वि० सं० २०३५

विनयावनत—
—लषण लाल झा

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
संज्ञाध्यायः	
मङ्गलाचरणम्	१
टीकाकर्तृमङ्गलाचरणम्	१
ग्रन्थनिर्माणकारणम्	२
सत्कवीनां हर्षप्रदं कथनम्	३
लग्नादीनां संज्ञाकथनम्	४
तन्वादीनां विशेषसंज्ञा	४
केन्द्रादीनां संज्ञा	६
ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रामित्रविचारः	७
राहु केतु के मित्रादि विचार (टी.)	७
ग्रहमैत्री-चक्रम् (टी.)	८
ग्रहदृष्टि-विचारः	८
राहु-केतु का दृष्टिविचार (टी.)	९
प्रथमाध्यायोपसंहारः	९
भावाध्यायः	
वस्तुनिर्देशात्मकं मङ्गलम्	१०
तनुभावस्याशुभफलम्	१०
भावफल-विचारः (टी.)	१२
तनुभावस्य शुभफलम्	१२
अशुभयोगाः	१४
धनभावफलम्	१५
विशेष अन्वयोग (टी.)	१७
धनप्रदयोग ,,	१७
धनहीन-योग ,,	१८
अन्वयोगाः	१८
सहजभावफलम्	१९
भ्रातृ-भगिनी संख्या विचारः (टी.)	२०
भ्रातृसुख योग (टी.)	२०
भ्रातृहानि योग ,,	२०

विषय	पृष्ठ
सुखभावफलम्	२०
गृहप्राप्त्यादियोगाः	२२
वाहन-विनाश-योगौ	२३
सुखद-योग (टी.)	२४
पञ्चमभावफलम्	२४
मूकसन्तानाभावयोगौ	२५
विशेषपुत्राभावयोगः (टी.)	२६
पुत्रप्रदयोगः (टी.)	२७
सन्तानयोगाः	२७
अन्य सन्तानयोगाः	२८
प्रथम पुत्र या कन्या जन्म का ज्ञान (टी.)	२९
सन्तानलाभे वर्षज्ञानम्	३०
सन्तानोपायः	३०
रिपुभावफलानि	३१
अन्य-योगाः	३२
दन्तादिरोगयोगाः	३३
अन्यान्यरोगयोगाः	३४
सप्तमभावे विवाहयोगः	३६
अन्य योगाः	३७
सप्तमभाव के विशेष योग (टी.)	३७
द्विविवाहयोग (टी.)	३७
विवाह-वर्ष योग ,,	३८
गर्भाभावयोगाः	३८
अष्टमभावफलम्	३९
अल्पायुप्रभृतियोगाः	४०
नवमभाव-फलम्	४१
योगफलकथनपूर्वकराजयोगाः	४३
चिन्तायोगाः	४३

विषय	पृष्ठ
दीर्घमध्याल्पायुर्योगाः	४५
नवमादिभावविचारः	४६
भाग्यवृद्धिकारकयोगः (टी.)	४७
भाग्योदयकाल ज्ञान ,,	४७
वकील आदि के योग ,,	४७
इञ्जीनियर आदि के योग (टी.)	४७
चिकित्सक योग ,,	४७
लाभभाव का विचार (टी.)	४८
व्यय-भाव-फलम्	४८
द्वितीयाध्यायोपसंहारः	४९
योगाध्यायः	
योगस्य वैशिष्ट्यम्	५०
क्रोधादिदुष्टयोगाः	५०
जारजादियोगाः	५१
कुष्टादि-रोगयोगाः	५३
गण्डादिविविधरोगयोगाः	५४
खञ्जादिरोगयोगाः	५५
बुद्धिहीनादियोगाः	५७
हृदयादिरोगयोगाः	५८
मनुष्यस्वभावादिबोधकयोगाः	५८
कोविदादियोगाः	५९
व्यभिचारियोगाः	६०
अकीर्तिकरयोगाः	६१
रतिसुखविमुखयोगाः	६१
कामुक-योगाः	६२
मितभाष्यादियोगाः	६३
काणादि-योगाः	६३
नेत्रपीडादि-योगाः	६४
वामनादिदुष्टयोगाः	६४
प्लीहादिरोगयोगाः	६५
अङ्गहीनादियोगाः	६५
अङ्गविकार-योगाः	६६
क्लीवादियोगाः	६७
अन्यान्यषड्विधक्लीव-रोगयोगाः	६७
अण्डकोषवृद्धियोगाः	६८
दन्तरोगादि-योगाः	६९
शरीरे मुखे च दुर्गन्धि-योगाः	६९
फलादेशकथन-प्रकारः	७०
योगाध्यायोपसंहारः	७०
विषकन्याध्यायः	
विषकन्यायोगाः	७१
विषकन्यायोगपरिहारः	७२
विषकन्याध्यायोपसंहारः	७२
आयुर्दायाध्यायः	
आयुर्दायस्य वैशिष्ट्यम्	७३
दीर्घ-मध्यायुर्योगाः	७३
दीर्घायुर्योगाः	७४
अल्प-मध्य-दीर्घायुर्योगाः	७४
पूर्णायुर्योगाः	७५
अन्यान्यपरमायुर्योगाः	७७
पूर्णायुः तथा अल्पायुर्योगाः	७९
अत्यल्पायुर्योगाः	७९
दीर्घ-मध्य-अल्पायुर्योगाः	८०
आयुर्दायाविकारकथनम्	८५
फलादेशकथनप्रकारः	८५
आयुर्दायाध्यायोपसंहारः	८५
व्यत्यस्तभावाध्यायः	
लग्नेश-धनेशस्थानफलम्	८६
ग्रंथकारोक्तिः	८९
वंशाध्यायः	
ग्रंथकारवंशपरिचयः	९१

॥ श्रीः ॥

जातकालङ्कारः

सोदाहरण 'तत्त्वप्रकाशिका' संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेतः

—:०:—

अथ संज्ञाध्यायः

ग्रन्थकारकर्तृमङ्गलाचरणम्—

सानन्दं प्रणिपत्य सिद्धिसदनं लम्बोदरं भारतीं
सूर्यादिग्रहमण्डलं निजगुरुं भक्त्या हृदब्जे स्थितम्।
येषामंघ्रिसरोरुहस्मरणतो नानाविधाः सिद्धयः
सिद्धिं यान्ति लघु प्रयान्ति विलयं प्रत्यूहशैलव्रजाः ॥१॥

सद्भावाकलितं पदार्थललितं योगाङ्गलीलार्चितं
श्रीमद्भागवतं शुकास्यगलितं यच्छ्रीधरस्वामिना।
सुव्यक्तं क्रियते गणेशकविना गाथोक्तितज्जातकं
वृत्तस्रग्धरया जनादिसुफलं ज्योतिर्विदां जीवनम् ॥२॥

टीकाकर्तृमङ्गलाचरणम् —

हेरम्बजननीं नत्वा ध्यात्वा गुरुपदाम्बुजम्।
जातकालङ्कृतेष्टीकां कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥

संस्कृत—येषां देवानाम् अङ्घ्रिसरोरुहस्मरणतः=चरणकमलस्मृतितः नानाविधाः=अनेकप्रकारकाः, सिद्धयः=अभिलषितपदार्थाः, सिद्धिं = पूर्णतां, यान्ति=गच्छन्ति। तथा प्रत्यूहशैलव्रजाः=विघ्नमहीधरपटलाः, लघु=क्षिप्रं, विलयं=विनाशं,प्रयान्ति=गच्छन्ति। तान्कानित्याह-हृदब्जे=हृदयकमले,स्थितं, सानन्दं=आनन्देन सहितं, सिद्धिसदनं=श्रीनिवासं विष्णुं, लम्बोदरं=गणेशं,

भारतीं=सरस्वतीं, सूर्यादिग्रहमण्डलं निजगुरुं च भक्त्या प्रणिपत्य सद्भावाकलितं=विष्णुभक्तिरूपभावविशिष्टं, अन्यत्र लग्नादिभावैर्विशिष्टं, पदार्थंललितं=पदार्थरुचिरं, योगाङ्गलीलाचितं=भक्तियोगाङ्गोपदेशैः पूजितम्, अन्यच्च ग्रहयोगाङ्गघटनाविशेषैः प्रशस्तम्, जनादिसुफलं=जनादीनां शोभनफलदम्, अन्यत्र जनादीनां सम्यक् शुभाशुभफलवर्णनोपेतं, ज्योतिर्विदां=ब्रह्मविदां अन्यत्र-दैवज्ञानां, जीवनं=कालक्षेपयोग्यं, शुकास्यगलितं=शुकमुनिमुखात्निर्गतं, श्रीमद्भागवतं यथा श्रीधरस्वामिना व्यक्तं कृतं तथैव मया गणेशकविना गाथोक्तितज्जातकं=फक्किकारूपं शुकनिर्मितजातकं वृत्तस्रग्धरया=स्रग्धराछन्दैः, सुव्यक्तंक्रियते=स्पष्टार्थं विधीयते। स्रगधरावृत्तस्य लक्षणम्—म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता 'स्रग्धरा' कीर्त्तितेयम् ॥ १-२ ॥

हिन्दी—जिनके चरण कमल के स्मरण करने से विवध प्रकार की अभिलषित कार्य सिद्धियाँ सफल हो जाती हैं और विघ्नरूप पर्वत समूह अर्थात् बड़े-बड़े विघ्न शीघ्र ही नाश हो जाते हैं, ऐसे सभी के हृदय में निवास करने वाले आनन्द से युक्त विष्णु, गणेश, सरस्वती, सूर्यादिग्रह और अपने गुरु को भक्ति पूर्वक प्रणामकर सद्भाव से युक्त अर्थात् विष्णु-भक्ति-विशिष्ट पद और अर्थों से सुन्दर, भक्तियोग के उपदेश से प्रशस्त, प्राणिसमुदाय को शुभफलप्रद और परमात्मा को जानने वालों का जीवनरूप श्री शुकमुनि के मुख से निकले हुए श्री मद्भागवत महापुराण को जिसतरह श्रीधरस्वामी ने व्यक्त किया उसी प्रकार मैं गणेश ज्योतिषी लग्नादिद्वादशभाव फल से युक्त सुन्दर पदार्थ वाला, ग्रहयोगोत्पन्न विशेष घटनावर्णन से प्रशस्त, जीवों के शुभाशुभफल से युक्त, ज्योतिषियों का जीवन, और गाथा की उक्ति से सहित या फक्किका रूप शुक मुनिप्रणीत जातक अर्थात् 'शुक जातक' नामक ग्रन्थ को स्रग्धरा छन्दों द्वारा स्पष्ट करता हूँ ॥ १-२ ॥

ग्रन्थनिर्माणकारणम्—

यत्पूर्वं परमं शुकास्यगलितं सज्जातकं फक्किका
रूपं गूढतमं तदेव विशदं कुर्वे गणेशोऽस्म्यहम्।

दैवज्ञः सुतरां यशः सुखमतिः श्रीहर्षदं स्रग्धरा
वृत्तैश्चारु नृणां शुभायनपदं श्रीमच्छिवानुज्ञया ॥३॥

संस्कृत—श्रीमच्छिवानुज्ञया = श्री शिवगुरोराज्ञया, सुतरां, यशःसुखमतिः = कीर्त्यानन्दवृद्धिः, अहं गणेशदैवज्ञः पूर्वं = पुराकाले यत् परमं = उत्कृष्टं, शुकास्यगलितं = श्रीशुकमुनिमुखान्निर्गतं, गूढ़तमं = अतिकठिनं, फक्किका-रूपं = सूत्ररूपं, सज्जातकं = समीचीनजातकशास्त्रं, तदेव नृणां = मनुष्याणां, श्रीहर्षदं, शुभास्पदं = मंगलास्पदं, स्रग्धरावृत्तैः चारु = रुचिरं, विशदं कुर्वे = विशदीकरणं करोमीत्यर्थः ॥ ३ ॥

हिन्दी—श्री शिव नामक गुरु की आज्ञा से कीर्त्ति जन्य आनन्द को चाहने वाला मैं गणेश दैवज्ञ पूर्व में जो अत्यन्त उत्कृष्ट श्री शुकमुनि-कथित अतिकठिन सूत्र रूप उत्तम जातकशास्त्र है, उसी को स्रग्धरा छन्दों में सुन्दररूप से विस्तार करता हूँ, अर्थात् सरल बनाता हूँ, जो मानवों को लक्ष्मी, आनन्द और शुभाशुभ फलों को देनेवाला है ॥ ३ ॥

सत्कवीनां हर्षप्रदं कथनम्—

भूयांसः सन्ति भूमौ निजमतिरचनाशालिनः काव्यगुम्फे
संख्यावन्तस्ताऽपि प्रचुरपरगुणानन्दलीलां भजन्ते ।
चञ्चद्गाम्भीर्यपद्मानिबुधविटपिनां जन्मसंप्राप्तभूतो
मर्यादां न स्वकीयां त्यजति किल महान् रत्नधामा सरस्वान् ॥४॥

संस्कृत—भूमौ = पृथिव्यां यद्यपि काव्यगुम्फे = काव्यरचनायां, निजम-तिरचनाशालिनः = स्वबुद्ध्यनुकूलरचनाविधायकाः कवयः भूयांसः = संख्यावन्तः सन्ति, तथापि (ते) प्रचुरपरगुणानन्दलीलां भजन्ते = अन्यकृतो त्कृष्टगुणजनितरचनायामानन्दमनुभवन्तीत्यर्थः, यथा किल चञ्चद्गाम्भीर्य-पद्माविबुधविटपिनां = चञ्चद् गाम्भीर्यं द्योतमानानिश्चलता च पद्मा

लक्ष्मी च विबुधविटपी सुरद्रुमश्चेति, एतेषां जन्मसम्प्राप्तिभूतः = आधारः महान् रत्नधामा (रत्नानि किरणानि यस्मिन् सः) सरस्वान् = समुद्रः स्वकीयां मर्यादां न त्यजति ॥ ४ ॥

हिन्दी—इस धरातल पर यद्यपि अपनी बुद्धि के अनुसार काव्यरचना करने वाले अनेक कवि हैं तथापि वे अन्यकृत उत्कृष्ट रचना से अतिप्रसन्न होते हैं। जिस तरह गाम्भीर्यादिगुण तथा लक्ष्मी और पारिजात को उत्पन्न करने वाला और रत्नों की किरणों से युक्त श्रेष्ठ समुद्र अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ता इसी तरह मेरी कृति का देखकर विद्वान् प्रसन्न होंगे ॥ ४ ॥

लग्नादीनां संज्ञाकथनम्—

देहं द्रव्यपराक्रमौ सुखसुतौ शत्रुः कलत्रं मृति-
र्भाग्यं राजपदं क्रमेण गदिता लाभव्ययौ लग्नतः।
भावा द्वादश तत्र सौख्यशरणं देहं मतं देहिनां
तस्मादेव शुभाशुभाख्यफलजः कार्यो बुधैर्निर्णयः ॥५॥

संस्कृत—लग्नतः क्रमेण देह-द्रव्य-पराक्रम-सुख-सुत शत्रु-कलत्र-मृति-भाग्य-राज्यपद-लाभ-व्यया, एते द्वादश भावानां संज्ञा तत्र देहिनां (प्राणिनां), सौख्यशरणं (सुखाश्रयं) देहं मतम्। अतो बुधैः तस्मादेव शुभाशुभाख्य-निर्णयः कार्यः ॥ अत्र शार्दूलच्छन्दः ॥ ५ ॥

हिन्दी—लग्न से बारहों भावों के नाम क्रम से देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृति, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय हैं। अर्थात् लग्न का नाम देह, दूसरे का द्रव्य, तीसरे का पराक्रम और चौथे का सुख इसी तरह आगे भी जानना चाहिए। इनमें प्राणियों के सुख का आधार लग्न अर्थात् देह भाव है अतः पण्डित जन उस भाव से ही शुभाशुभ फल का निर्णय करें ॥ ५ ॥

तन्वादीनां विशेषसंज्ञा—

लग्नं मूर्तिस्तथाङ्गं तनुरुदयवपुः कल्पमाद्यं ततः स्वं
कोशार्थाख्यं कुटुम्बं धनमथ सहजं भ्रातृदुश्चिक्यसंज्ञम्।

अम्बापातालतुर्यं हिबुकगृहसुहृद्वाहनं यानसंज्ञं
बन्ध्वाख्यं चाम्बु नीरं जलमथ तनयं बुद्धिविद्यात्मजाख्यम् ॥ ६ ॥

संस्कृत—लग्नं मूर्तिस्तथाङ्गं तनुरुदयवपुः कल्पमाद्यं लग्नपर्यायाः। ततः स्वं कोशार्थाख्यं कुटुम्बं धनं, एते द्वितीय भावस्य, अथ सहजं भ्रातृदुश्चिक्यसंज्ञम्, एते तृतीयस्य, अम्बापातालतुर्यं हिबुक गृह सुहृद् वाहनं यान संज्ञं बन्ध्वाख्यं अम्बु नीरं जलञ्च एते चतुर्थस्य, अथ तनयं बुद्धि विद्यात्मजाख्यं वाक्स्थानं पञ्चमं, एते पञ्चमभावस्य पर्यायाः सन्ति ।। ६ ।।

हिन्दी—लग्न, मूर्ति, अङ्ग, तनु, उदय, वपु, कल्प और आद्य ये प्रथम भाव के पर्यायवाची हैं। स्व, कोश, अर्थ, कुटुम्ब एवं धन ये द्वितीय भाव की संज्ञा हैं। सहज, भ्रातृ, और दुश्चिक्य ये तृतीय भाव के नाम हैं। अम्बा, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद्, वाहन, यान, बन्धु, अम्बु, नीर और जल ये चतुर्थ भाव के पर्यायवाची हैं। तनय, बुद्धि, विद्या, आत्मज, वाक्स्थान, पञ्चम् और तनुज ये पञ्चम भाव की संज्ञा है ॥ ६ ॥

वाक्स्थानं पञ्चमं स्यात्तनुजमथ रिपुद्वेषवैरिक्षताख्यं
षष्ठं जामित्रमस्तं स्मरमदनमदद्यूनकामाभिधानम्।
रन्ध्रायुश्छिद्रयाम्यं निधनलयपदं चाष्टमं मृत्युरन्यद्
गुर्वाख्यं धर्मसंज्ञं नवममिह शुभं स्यात्तपोमार्गसंज्ञम् ॥७॥

संस्कृत—वाक् स्थानं पञ्चमं स्यात्तनुजमित्यस्य पूर्वेण संबन्धः। अथ रिपु द्वेषि वैरि क्षताख्यं षष्ठं चैते षष्ठस्य पर्यायाः। जामित्रमस्तं स्मरमदन मदद्यून कामाभिधानं, एते सप्तमस्य, रन्ध्रायुश्छिद्र याम्यं निधनलयपदं अष्टमं अन्यद् मृत्युः, एतेऽष्टमभावस्य, गुर्वाख्यं धर्मसंज्ञं नवमं, शुभं, तपोमार्ग संज्ञं, इह एते नवमस्य पर्यायाः सन्ति ॥ ७ ॥

हिन्दी—रिपु, द्वेषि, वैरि, क्षत और षष्ठ ये छठें भाव के नाम हैं। जामित्र, अस्त, स्मर, मदन, मद, द्यून और काम ये सप्तम भाव के नाम हैं। रन्ध्र, आयु, छिद्र, याम्य, निधन, लयपद, अष्टम और मृत्यु ये अष्टम भाव की

संज्ञा हैं। गुरु, धर्म, नवम, शुभ, तप और मार्ग ये नवम भाव के पर्यायवाची हैं ॥ ७ ॥

ताताज्ञामानकर्मास्पदगगननभो व्योममेषूरणाख्यं
मध्यं व्यापारमूचुर्दशममथ भवं चागमं प्राप्तिमायम् ।
इत्थं प्रान्त्यान्तिमाख्यं मुनय इह ततो द्वादशं रिःफमाहु-
र्ग्राह्यं बुद्ध्वा प्रवीणैर्यदधिकममुतः संज्ञया तस्य तच्च ॥८॥

संस्कृत—ताताज्ञामान कर्मास्पद गगन नभो व्योम मेषूरणाख्यं मध्यं व्यापारं दशमं च एते दशमभावस्य पर्याया मुनयः ऊचुः। अथ भवं, आगमं, प्राप्ति, आयं च एते एकादश भावस्य, ततो इत्थं प्रान्त्यान्तिमाख्यं द्वादशं रिःफं च एते द्वादशभावस्य पर्यायाः मुनय आहुः। अमुतः यदधिकं तद् प्रवीणैः तस्य तच्च संज्ञया बुद्ध्वा ग्राह्यमिति ॥ ८ ॥

हिन्दी—तात, आज्ञा, मान, कर्म, आस्पद, गगन, नभ, व्योम, मेषूरण, मध्य, व्यापार और दशम ये दशम भाव के नाम हैं। भव, आगम, प्राप्ति और आय ये एकादश भाव के पर्यायवाची शब्द हैं। इसी प्रकार प्रान्त्य, अन्तिम द्वादश और रिःफ को मुनियों ने द्वादश भाव के पर्यायवाची कहे हैं। इनसे विशेष जो संज्ञा इस ग्रन्थ में हों उनको उक्त नामों के पर्यायवाची समझकर—बुद्धिमान् व्यक्ति ग्रहण करें ॥ ८ ॥

केन्द्रादीनां संज्ञा—

आद्यं तुर्यं कलत्रं दशममिह बुधैः केन्द्रमुक्तं त्रिकोणं
पुत्रं धर्माख्यमुक्तं पणफरमुदितं मृत्युलाभात्मजार्थम् ।
धर्मं चापोक्लिमाख्यं व्ययरिपुसहजं कण्टकाख्यं हि केन्द्रं
चैतच्चातुष्ट्यं स्यात् त्रिकमिह गदितं वैरि रिःफान्तकाख्यम् ॥९॥

संस्कृत—बुधैः, इह आद्यं तुर्यं कलत्रं दशमं केन्द्रमुक्तम्। पुत्रं धर्माख्यं त्रिकोणमुक्तम्, मृत्युलाभात्मजार्थं पणफरमुदितं, व्ययरिपुसहजं धर्मञ्च आपोक्लिमाख्यं, कण्टकाख्यं, एतत् चातुष्ट्यं च केन्द्रं स्यात्। इह वैरि रिःफान्तकाख्यं त्रिकं गदितम् ॥ ९ ॥

हिन्दी—लग्न और लग्न से चतुर्थ, सप्तम एवं दशम स्थानों को विद्वान् लोग केन्द्र कहते हैं। लग्न से पञ्चम और नवम भावों की संज्ञा त्रिकोण, लग्न से अष्टम, एकादश, पञ्चम और द्वितीय स्थान पणफर संज्ञक और द्वादश, षष्ठ, तृतीय और नवम स्थान आपोक्लिम् संज्ञक हैं। केन्द्र को कण्टक और चतुष्टय भी कहते हैं। लग्न से छठे, बारहवें और आठवें स्थानों की संज्ञा त्रिक है ॥ ९ ॥

ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रामित्रविचारः—

चन्द्रेज्यक्षितिजा रवीन्दुतनयौ गुर्विन्दुसूर्याः क्रमा-
च्छुक्रार्कौ रविचन्द्रभूमितनयज्ञार्की सितज्ञौ मताः।
अर्कादेः सुहृदः समा अथ बुधः सर्वे हि शुक्रार्कजौ
भौमाचार्ययमायमः कुजगुरू पूज्यः परे वैरिणः ॥१०॥

संस्कृत—चन्द्रेज्य क्षितिजा, रवीन्दुतनयौ, गुर्विन्दुसूर्याः, शुक्रार्कौ रविचन्द्र भूमितनयाः, ज्ञार्कि, सितज्ञौ, क्रमात् अर्कादेः सुहृदः भवन्ति। अथ बुधः, सर्वे, शुक्रार्कजौ, भौमाचार्ययमाः, यमः, कुजगुरू, पूज्यश्च क्रमात् अर्कादेः समाः मताः। परे ग्रहाः अर्कादेः वैरिणः मताः ॥ १० ॥

हिन्दी—इस श्लोक में सूर्यादि ग्रहों के मित्र, सम और शत्रु कहे गये हैं—जैसे निम्नलिखित हैं—

सूर्य के चन्द्र, गुरु और मंगल मित्र, बुध सम और शुक्र शनि शत्रु हैं। चन्द्र के रवि और बुध मित्र, शेष ग्रह सम हैं। मंगल के गुरु, चन्द्र और रवि मित्र, शुक्र एवं शनि सम, बुध शत्रु हैं। बुध के शुक्र और रवि मित्र, मंगल, गुरु और शनि सम, चन्द्र शत्रु हैं। गुरु के रवि, चन्द्र और मंगल मित्र, शनि सम, बुध और शुक्र शत्रु हैं। शुक्र के बुध और शनि मित्र, मंगल एवं गुरु सम, रवि और चन्द्र शत्रु हैं। शनि के शुक्र और बुध मित्र, गुरु सम, रवि, चन्द्र, मंगल शत्रु हैं ॥ १० ॥

वि०—राहु और केतु के मित्रादि विचार निम्न है—

रविचन्द्रकुजा राहोः रिपवः परिकीर्तिताः।
समौ बुधगुरू ज्ञेयौ मित्रे शुक्रशनैश्चरौ ॥ १ ॥

केतोः शनिसितौ शत्रू, समौ गुरुबुधौ स्मृतौ।
रविचन्द्रकुजास्तस्य मित्राणि सम्भवन्ति हि ॥ २ ॥

स्पष्टार्थ ग्रहमैत्री चक्रम्

ग्रहाः	रविः	चन्द्रः	भौमः	बुधः	गुरुः	शुक्रः	शनिः	राहुः	केतुः
मित्र	चं० बृ० मं०	र० बु०	बृ० र० चं	शु० र०	र० च० मं०	बु० श०	शु० बु०	शु० श०	र० चं० मं०
समः	बु०	मं० बृ० शु० श०	शु० श०	मं० बृ० श०	श०	मं० बृ०	बृ०	बु० बृ०	बु० बृ०
शत्रुः	शु० श०	०	बु०	चं०	बु० शु०	र० चं०	र० च० मं०	र० चं० मं०	श० शु०

ग्रहदृष्टि-विचारः—

तृतीयदशमे ग्रहो नवमपञ्चमेष्टांबुनी
क्रमाच्चरणवृद्धितः स्मरगृहं ततः पश्यति।
कुजः सितबुधौ शशी रविबुधौ सितक्ष्मासुतौ
गुरुर्यमशनी गुरुर्भवनपा इमे मेषतः ॥ ११ ॥

संस्कृत—ग्रहः क्रमात् तृतीय दशमे, नवमपञ्चमे, अष्टाम्बुनौ, ततः स्मरगृहं च चरणवृद्धितः पश्यति। कुजसितबुधादयो ग्रहाः मेषतः क्रमेण भवनाधीशाः भवन्तीत्यर्थः ॥ ११ ॥

हिन्दी—सभी ग्रह अपने स्थान से तृतीय, दशम, नवम, पञ्चम, अष्टम, चतुर्थ तथा सप्तम स्थान को चरणाभिवृद्धि के क्रम से अर्थात् अपने से ३।१० को १ चरण से, ९/५ को दो चरण से, ८/४ को तीन चरण से और सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। विशेष है कि शनि अपने से ३/१० को, गुरु ९/५ को और मंगल ४/८ को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

मेषादि द्वादश राशियों के स्वामी क्रम से मंगल, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, शनि और गुरु हैं। अर्थात् मेष-वृश्चिक का मंगल, वृष-तुला का शुक्र, मिथुन-कन्या का बुध, धनु-मीन का गुरु, मकर-कुम्भ का शनि, सिंह का सूर्य और कर्क का चन्द्रमा स्वामी है। इस श्लोक में पृथ्वी छन्द है ।। ११ ।।

वि०—राहु और केतु का दृष्टि विचार—

राहु और केतु अपने स्थान से ५।७।९।१२ इन स्थानों को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। १०।२ को तीन चरण से, ३।४—८।६ को दो चरण से देखते हैं। वे दोनों ग्रह १।११ इन स्थानों को नहीं देखते हैं।

कन्या राशि का स्वामी राहु और मिथुन का स्वामी केतु है।

प्रथमाध्यायोपसंहारः—

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलंकाराख्ये जातके मंजुलेऽस्मिन्।
संज्ञाध्यायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्दिग्भिः संयुतोऽयं प्रणीतः ॥१२॥

इति जातकालङ्कारे संज्ञाध्यायः ॥ १ ॥

—०—

संस्कृत—श्री गणेशेन विदुषा हृद्यैः मनोहरैः पद्यैः श्लोकैः गुम्फिते रचिते सूरितोषे विद्वज्जनानन्दप्रदे मञ्जुले रुचिरे अस्मिन् अलङ्काराख्ये जातकेऽर्थात् जातकालङ्कारे वर्यैः श्रेष्ठैः दिग्भिर्वृत्तैः दशभिः श्लोकैः संयुतः, अयं संज्ञाध्यायः प्रणीतः रचितः ।। १२ ।।

हिन्दी—श्री गणेश दैवज्ञने मनोहर छन्दों से रचित विद्वानों को आनन्द देनेवाला इस सुन्दर जातकालङ्कार नामक ग्रन्थ में उत्तम दश श्लोकों से युक्त पहला संज्ञाध्याय बनाया ।। १२ ।।

इति जातकालङ्कारे प्रथमः संज्ञाध्यायः ।। १ ।।

—०—

अथ भावाध्यायः

वस्तुनिर्देशात्मकं मङ्गलम्—

शुकाननसरोरुहाद् गलितमत्र भूमीतले
फलं परमसुन्दरं सकलमाकलय्याधुना।
ब्रवीमि तनुभावतः प्रवरदैवचित्तोषदं
यदत्र मम चापलं किमपि तत्क्षमध्वं बुधाः ॥ १ ॥

संस्कृत—यत्र भूमीतले=पृथिव्यां, शुकाननसरोरुहाद्गलितं=शुकमुनि-मुखाब्जाद्विनिर्गतं, परमसुन्दरं=सर्वोत्कृष्टमनोहरं, सकलं फलं=सम्पूर्णं फलं, आकलय्य=विचार्य, अधुना=साम्प्रतं, प्रवरदैवचित्तोषदं=श्रेष्ठज्योतिर्विदामानन्दप्रदं, तनुभावतः=लग्नादारभ्य (व्ययभावपर्यन्तस्य भाव फलं) ब्रवीमि=कथयामि। हे-बुधाः! अत्र भावफल कथने यद् मम किमपि चापलं=चाञ्चल्यं, स्यात् तद् यूयं क्षमध्वमिति ॥ १ ॥

हिन्दी—इस पृथवी पर शुक मुनि के मुखारविन्द से निकले हुये अत्यन्त सुन्दर सम्पूर्ण जातक सम्बन्धी भावफलों को विचार कर मैं श्रेष्ठ ज्योतिषी को प्रसन्न करने वाले लग्नादि द्वादश भावफलों को कहता हूँ। इस भावफल के कथन में जो कुछ मेरी चपलता हो उसे विद्वज्जन क्षमा करें ॥ १ ॥

तनुभावस्याशुभफलम्—

देहाधीशः स पापो व्ययरिपुमृतिगश्चेत्तदा देहसौख्यं
न स्याज्जन्तोर्निजर्क्षे व्ययरिपुमृतिपस्तत्फलस्यैव कर्ता।
मूर्तौ चेत् क्रूरखेटस्तदनु तनुपतिः स्वीयवीर्येण हीनो
नानातङ्काकुलः स्याद् व्रजति हि मनुजो व्याधिमाधिप्रकोपम् ॥२॥

संस्कृत—देहाधीशः=लग्नेशः, सपापः=पापग्रहेण युक्तः, व्ययरिपुमृतिगः=द्वादशषष्ठाष्टमान्यतमस्थानस्थितः, चेत्तदा जन्तोः=प्राणिनः, देहसौख्यं=शरीरसुखं न स्यादित्येको योगः। व्ययरिपुमृतिपः=द्वादशषष्ठाष्टमेशः

निजर्क्षे = स्वराशौ, भवेत्तदा तत्फलस्यैव कर्ता देहसुखभावफलस्यैव कारको भवतीति द्वितीयो योगः। चेत् मूर्तौ लग्ने, क्रूरखेटः = पापग्रहः, तदनु तनुपतिः = लग्नेशः, स्वीयवीर्येण = निजबलेन, हीनः = रहितः, तदा मनुजः = मानवः, नानातङ्काकुलः = विविधभयादिशेकाव्याप्तः, (सन्) हि = निश्चयेन, व्याधिमाधिप्रकोपं = रोगचिन्ताव्याप्तत्वं, व्रजति = प्राप्नोति, इति तृतीयोयोगः ॥ २ ॥

हिन्दी—पापग्रह से युक्त लग्नेश यदि लग्न से १२।६।८ इन स्थानों में हो तो मानव को शरीर सुख नहीं होता। अथवा यदि द्वादशेश द्वादश में; षष्ठेश षष्ठ में और अष्टमेश अष्टम में हो तो शरीरसुख न हो। एवं लग्न में पापग्रह हो और लग्न का स्वामी बलहीन हो तो जातक विविध प्रकार की भय आदि की शंकाओं से युक्त होकर रोग और चिन्ता से व्याप्त होता है ॥ २ ॥

युक्तिः—दुष्ट व्यक्ति के साथ कोई भी व्यक्ति यदि व्यय, शत्रु और मृत्यु स्थान अर्थात् कष्टप्रद स्थान में रहेगा तो वह सुखी न रहेगा अतः शरीराधिपति को पापयुक्त १२।६।८ स्थानों में रहने पर अशुभ फल कहा गया है। जिस घर में जो रहता है वह उसका विनाश नहीं चाहता अतः १२।६।८ इन स्थानों के स्वामी अपने घर में रहने पर क्रम से व्ययकारक शत्रु-कारक और मृत्युकारक होने से द्वितीय योग भी अशुभ कारक सिद्ध हुआ। गृहपति निर्बल हो और उसके घर में दुष्ट हो तो उसे घर का सुख मिलना संभव नहीं है इस लिये तीसरा योग अशुभ कहा गया ॥ २ ॥

वि०—बृहज्जातक मानसागरी पाराशर एवं जातक तत्त्व प्रभृति ग्रन्थों में स्वराशिस्थ व्ययेश, षष्ठेश और अष्टमेश का फल शुभ कहा गया है, इस कारण पण्डित हरभानु ने लिखा है, "देहाधीशे व्ययरिपुमृतिगे सति तद्भवनपेऽपि तत्रस्थे शुभफलं न स्यादितिवाच्यम्" अर्थात् लग्नेश यदि १२।६।८ इन में हो और वहाँ उस स्थान का स्वामी भी हो तब अशुभ फल होगा। यह युक्ति संगत जान पड़ता है, कारण शरीर का मालिक लग्नेश यदि व्यय शत्रु एवं मृत्यु स्थान में उन स्थानाधिपति के साथ रहेगा तो निर्बल होने के कारण शुभ फलद न होगा। वराहमिहिराचार्य ने लिखा है—"रिपुभवनपेरिपुस्थे निरुग्वैरी सुखी कृपणः। निधनपतौ निधनस्थे व्यवसायी व्याधिवर्जितोऽभ्युदितिः"। स्वराशि, स्वोच्च, मित्र क्षेत्र, मित्रोच्च स्वमूलत्रिकोण एवं स्वषड्वर्ग में ग्रह रहने से शुभप्रद होते हैं ॥ २ ॥

भावफल विचार—

जो भाव अपने स्वामी से एवं शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो उसकी वृद्धि और अशुभ ग्रह के संयोग में हानि होती है। जिस भाव का स्वामी अपनी नीच राशि में या शत्रु क्षेत्र में निर्बल हो अथवा पापयुत दृष्ट हो, अस्त हो या लग्न से ६।८।१२ इन स्थानों में हो तो उस भाव का विनाश करता है। यदि स्वोच्च मित्रक्षेत्र, स्वगेह, मूल त्रिकोण, शुभ षड्वर्ग एवं केन्द्र त्रिकोण में हो और शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो भाव की अभिवृद्धि करता है। अधम योग कारक ग्रह यदि शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो अशुभ फल की न्यूनता तथा शुभ योग कारक अशुभ ग्रह से सम्बन्धित होने पर शुभ फल की न्यूनता होती है। जिस भाव से १।४।७।१०।९।५ इन स्थानों में शुभ ग्रह हों या उनकी दृष्टि हो तो उसकी वृद्धि एवं पाप ग्रह के सम्बन्ध से हानि होती है। मिश्र ग्रह के सम्बन्ध से मध्यम फल होता है। ६।८।१२ भावों में पापग्रह के सम्बन्ध से वृद्धि एवं शुभ ग्रह के सम्बन्ध से हानि होती है। जैसे—कहा गया है "निधनान्त्यरिपुभावे व्युत्क्रमात्फलदा"। उक्तरीति से प्रत्येक भाव का विचार कर फलादेश करना चाहिए।

उदाहरण—मान लिया कि वृष लग्न में राहु और लग्न से चतुर्थ बुध पञ्चम में रवि, षष्ठ में शनि शुक्र, सप्तम में केतु, अष्टम में चन्द्र गुरु और द्वादश में मंगल है। इस कुण्डली में लग्नेश शुक्र शनि के साथ छठे घर में है अतः प्रथम योग हुआ। लग्न से द्वादश स्थान का स्वामी मंगल द्वादश में, षष्ठेश शुक्र षष्ठ मे और अष्टमेश गुरु अष्टम में है अतः द्वितीय योग घटा। उक्त ग्रह स्थिति में कर्क लग्न होने से लग्नेश चन्द्र षष्ठेश गुरु के साथ छठे में होगा। परन्तु चन्द्र अपने मित्र गुरु के साथ है अतः पूर्ण अशुभ कारक न होगा। इसी तरह वृष लग्न में राहु और कन्या राशि में रवि के साथ लग्नेश शुक्र होने से तीसरा योग होगा। प्रत्येक योग में शुभाशुभ ग्रहों का सम्बन्ध देखकर शुभ या अशुभ फल का निर्माण करना चाहिए।

तनुभावस्य शुभफलम्—

अङ्गाधीशः स्वगेहे बुधगुरुकविभिः संयुतः केन्द्रगो वा
स्वीये तुङ्गे स्वमित्रे यदि शुभभवने वीक्षितः सत्स्वरूपः।

स्यान्नूनं पुण्यशीलः सकलजनमतः सर्वसंपन्निधानं
ज्ञानी मन्त्री च भूपः सुरुचिरनयनो मानवो मानवानाम् ॥ ३ ॥

संस्कृत—अंगाधीशः=लग्नेशः, स्वगेहे=निजभवने, वा बुधगुरुशुक्रत्रिभिः-संयुतः केन्द्रगः = प्रथमचतुर्थसप्तमदशमस्थानान्यतमस्थानस्थः, वा स्वीयेतुङ्गे=निजोच्चे, स्वमित्रे=निजमित्रगृहे, वा शुभ भवने=शुभराशौ, यदि शुभ ग्रहैः, वीक्षितः=दृष्टः, स्यात्तदा नूनं=निश्चितं, जातकः सत्स्वरूपः=सत्व गुणानुरूपाकृतिः, पुण्यशीलः = सुकृती, सकलजनमतः = सर्वजनमान्यः, सर्वसम्पन्निधानं=निखिलसम्पदामाश्रयः, ज्ञानी=ज्ञानवान्, मन्त्री=अमात्यः, भूपः=नृपतिः, सुरुचिरनयनः=सुन्दरलोचनः, मानवानां=नराणां मध्ये, मानवः=मान्यः नरश्च स्यादिति ॥ ३ ॥

हिन्दी—लग्न का स्वामी यदि अपनी राशि में हो, या बुध गुरु और शुक्र से युत होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो, या अपनी उच्चराशि या मित्र राशि अथवा शुभराशि में होकर शुभ ग्रहों से देखा जाय तो जातक सुन्दर, सत्कार्यकर्त्ता, लोकप्रिय, सम्पत्तिशाली, ज्ञानी, मन्त्री, राजा, सुन्दर नेत्र वाला और मनुष्यों में श्रेष्ठ प्रभावशाली होता है। यहाँ यह ध्यान रहे कि कुजादिग्रह दो दो राशियों के स्वामी हैं अतः 'स्वगेहे' का अर्थ लग्न और लग्न से भिन्न राशि भी होगा। लग्न में प्रधान और अन्यत्र गौण योग होगा। रवि और चन्द्र एक राशि के स्वामी होने से लग्न में ही रहने से योग कारक होंगे ॥ ३ ॥

उदाहरण—धनु लग्न है और लग्नेश गुरु मीन में बुध और शुक्र के साथ है। इस स्थिति में प्रथम एवं द्वितीय योग घटा यदि गुरु कर्क राशि में होता तो अपनी उच्च तथा मित्र राशि में पड़ता। उसे शुभ ग्रह देखता तो योग कारक होता।

युक्ति—घर का अधिपति यदि सब तरह से सबल रहे तो उसका सुन्दर घर होना स्वाभाविक है। इस हेतु लग्नेश लग्न में या स्वोच्चादि राशियों में शुभ युत दृष्ट होने पर बली होने से लग्नरूप शरीर का शुभ फल कहा गया है। केन्द्र (१।४।७।१०) का अर्थ अपना घर, सुखस्थान, स्त्री स्थान एवं कर्म स्थान है। इन स्थानों में रहने से सभी प्रसन्न रहते है अतः केन्द्र का शुभ फल कथित

है। बुध, गुरु और शुक्र ये क्रम से विद्या, ज्ञान और वीर्य (पराक्रम) के अधिपति हैं अतः इनकी सहायता से शुभ फल होना उचित ही है।

वि०—लग्नेश लग्न में हो तो सुन्दर, शुभ भवन में शुभग्रह की दृष्टि रहने पर स्वस्थ, सात्विक, केन्द्र में क्रम से सत्कार्य कर्त्ता, लोकप्रिय, सुखी, ज्ञानी, एवं मन्त्री, उच्च में नृप अर्थात् नायक, शासक, उच्चपदाधिकारी, राज्यपाल एवं राष्ट्रपति, मित्रक्षेत्र में लोकाकर्षक, और शुभराशिस्थ शुभ दृस्टि में प्रभावशाली जानना चाहिये। फलादेश में देश-काल एवं पात्र का विचार रखते हुए उक्त योगानुसार पूर्ण, मध्यम और साधारण आदेश करना उचित है॥ ३ ॥

अशुभयोगाः—

लग्ने क्रूरेऽथ याते खलखचरगृहं लग्ननाथे रवीन्दू
क्रूरान्तस्थानसंस्थावथ दिनपनिशानाथयोर्द्यूनयायी।
भूमीपुत्रस्तु पृष्ठादुदयमधिगतश्चन्द्रजश्चेन्मनस्वी
स्यादन्धो दुष्टकर्मा परभवनरतः पूरुषः क्षीणकायः ॥ ४ ॥

संस्कृत-अथ लग्ने क्रुरे=पाप ग्रहे, लग्ननाथे=लग्नेशे, खलखचरगृहं=पाप ग्रहभवनं, याते=प्राप्ते सति, अथवा रवीन्दू=सूर्यचन्द्रौ, क्रूरान्तस्थान संस्थौ=पापग्रहमध्य गतौ, एवं दिनपनिशानाथयोः=रविचन्द्रयोः, द्यूनयायी =सप्तमस्थानगतः, भूमीपुत्रः=भौमः, तथा चन्द्रजः=बुधः, चेत् पृष्ठादुदयमधिगतः=पृष्ठोदयराशिगतः, तदा एषु त्रिषुयोगेषु जातः मनस्वी=स्वमनोनुकूल कार्यकर्ता, अन्धः, दुष्टकर्मा=कुत्सितकर्मकारकः, परभवनरतः=अन्य गृहवासरतः, क्षीणकामः=कृशशरीरः, च स्यात् ॥ ४ ॥

हिन्दी—लग्न में पापग्रह हों और लग्नेश पाप ग्रह की राशि में हो अथवा सूर्य और चन्द्र पाप ग्रह के मध्य हों एवं सूर्य या चन्द्र से सप्तम में मंगल हों और बुध पृष्ठोदया (मेष, वृष, कर्क, मकर) राशि में हो तो इन तीनों योगों में उत्पन्न होने वाला जातक स्वेच्छाचारी, दृष्टिविहीन, निन्दित काम करनेवाला, अन्य के घर में रहनेवाला और पतला शरीर वाला दुर्बल होता है॥ ४ ॥

युक्तिः—यह स्वाभाविक बात है कि दुष्ट संगति का परिणाम अच्छा नहीं होता, अतः लग्न एवं लग्नेश पापाक्रान्त होने से अनिष्ट फल बताया गया। सूर्य आत्मा है और चन्द्र मन है अतः जिसके ये दोनों पापग्रह (दुष्ट) के बीच पड़ जायगें उसकी दुर्दशा होगी। मंगल सेनापति तथा बालाधीश है और सप्तम स्थान दूरदेश का द्योतक है। इस हेतु आत्मा (हृदय) रूप सूर्य और मनरूप चन्द्र से जिसका सेनाध्यक्ष अर्थात् रक्षक दूर हो जायगा और कुमार (पुत्र) रूप बुधग्रह पृष्ठोदय राशि में रहेगा अर्थात् पीठ दिखाने वाला समय पर काम न आनेवाला हो तो उसकी भी दुःस्थिति होती है। इस लिये उक्त तीनों योग अनिष्ट हैं।

वि०—सूर्य और चन्द्र पाप ग्रह के मध्य दो तरह से होंगे। प्रथम तो रवि चन्द्र से द्वितीय-द्वादश में पाप होने से और द्वितीय इन दोनों से अधिक अंश तथा न्यून अंश में पाप ग्रह एक राशि में होने से होगा।

लग्न से रूप, वर्ण, चिह्न, स्वभाव, गुण, शील, जाति, अवस्था, सुखदुःख, बलाबल एवं स्वस्थास्वस्थ का विचार होता है।

धनभावफलम्—

कोशाधीशः स्वराशौ सुरगुरुसहितः सर्वसंपत्प्रदः स्यात्
केन्द्रे वाथ त्रिके चेद्भवति हि मनुजः क्लेशभाग् द्रव्यहीनः।
स्वान्त्याधीशौ त्रिकस्थौ कवितनुपयुतौ स्यात्तदा नेत्रहीन
श्चन्द्रः पापेन युक्तो धनभवनगतः शुक्रयुङ् नेत्रहीनः॥ ५॥

संस्कृत—कोशाधीशः = धनभावेशः,सुर गुरुसहितः = गुरुणायुक्तः, स्वराशौ = निजगृहे वा केन्द्रे = लग्नचतुर्थसप्तमदशमस्थानान्यतम स्थाने (भवेत्तदा) सर्वसम्पत्प्रदः स्यात् = निखिलैश्वर्यप्रदो भवति। अथ चेद् गुरुयुक्तोधनेशः त्रिके = लग्नात् षष्ठाष्टमद्वादशस्थानेष्वन्यतमे, भवेत्तदा हि = निश्चयेन, मनुजः = नरः, क्लेशभाक् = कष्टभोगी, द्रव्यहीनः = धनहीनः, च भवति। कवितनुपयुतौ = शुक्र लग्नेश सहितौ, स्वान्त्याधीशौ = द्वितीयद्वादशस्थानाधीशौ, त्रिकस्थौ = षष्ठाष्टम द्वादशस्थानान्यतमस्थानगतौ, तदा मनुजः नेत्रहीनः = अन्धः स्यात्।

पापेन = पापग्रहेण, युक्तश्चन्द्रः धनभवनगतः = लग्नात् । द्वितीयस्थानस्थः, शुक्रयुक् = शुक्रेण सहितः, तदा नेत्रहीनः = नयनरहितः, स्यादिति ।। ५ ।।

हिन्दी—जिसकी जन्म कुण्डली में गुरु के साथ लग्न से द्वितीय स्थान का स्वामी (धनेश) अपनी राशि में हो, या केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो वह सर्वसम्पत्तिमान् होता है। यदि गुरु के साथ धनेश त्रिक (६।८।१२) हो तो वह दुःखी और धन हीन होता है। शुक्र और लग्नेश से युक्त धनेश और द्वादशेश आदि त्रिक् (६।८।१२) में हों तो मनुष्य अन्धा हो। पापग्रह और शुक्र से युक्त चन्द्रमा लग्न से द्वितीय में हो तो नेत्रहीन होता है ।। ५ ।।

उदाहरण—एक अन्धपुरुष की कुण्डली में सिंह लग्न है और लग्न से चतुर्थ गुरु, मंगल, पंचम राहु, षष्ठ में चन्द्र-शुक्र-बुध-रवि का योग, सप्तम शनि और एकादश में केतु है। इसमें लग्न से द्वितीय और द्वादश के स्वामी बुध और चन्द्र हैं। ये दोनों लग्नेश रवि और शुक्र के साथ लग्न से छठे घर में हैं अतः अन्ध-योग प्रत्यक्ष घटता है। इसमें अग्रिम योग भी लगा है अतः प्रबल योग के कारण पूर्ण अन्ध है। प्रथम धन योग एवं द्वितीय धनहीन योग स्पष्ट है।

युक्ति—व्यवहारिक दृष्टि में जिसके वित्तपदाधिकारी सचिव से मिले रहते हैं उसकी धनवृद्धि होती है, अतः मन्त्री गुरु के साथ धनेश रहने पर धनप्रद योग होगा। यदि सचिव के साथ कोषाध्यक्ष शत्रु स्थान याने शत्रु पक्ष में हो जाय या मृत्युस्थान या व्ययस्थान में अर्थात् अहितकारक तथा असद्व्यय-कारक हो जाय तो धनाभाव होना उचित ही है। इस हेतु त्रिक (६।८।१२) में गुरु सहित धनेश का फल धनहीन होना कहा गया है। द्वितीय और द्वादश नेत्रस्थान हैं, अतः नेत्र स्थान का स्वामी वीर्याधिपति शुक्र एवं शरीराधिपति लग्नेश से युत होकर त्रिक (६।८।१२) होने से नेत्रहीन योग होगा। चतुर्थ योग की युक्ति यह है कि शुक्रपाप से युक्त अर्थात् मद और अशुभ विचार से युत चन्द्र स्थानीय मनवाला पुरुष यदि धनी हो तो वह अपने सामने दूसरों को नहीं देखता अतः वह अन्धा होता है। इस कारण उक्त अन्ध-योग युक्ति संगत है ।। ५ ।।

विशेष अन्धयोग—

१—रविशुक्र के साथ लग्नेश ६।८।११ में हो।

२—धनेश व्ययेश के साथ शुक्र एवं लग्नेश ६।८।१२ में हो।

३—पाप युक्त द्वितीयस्थ शुक्रचन्द्र का योग हो।

४—पाप दृश्य युत शुभगृह ६।८।१२ में हो।

५—लग्न से सप्तम मकर या कुम्भ में रवि हो।

६—कुम्भ लग्नस्थ मंगल केन्द्रस्थ या पापराशि में हो।

७—चन्द्र रवि का याग १।३।४।६।१० में बुधचन्द्र ६।८।१२ में हो।

८—धनेश व्ययेश और लग्नेश के साथ रवि ६।८।१२ में हो।

९—चन्द्र मंगल या जन्द्र गुरु का योग ६।८।१२ में हो।

१०—पाप दृष्टचन्द्र ६।१२ में हो या ५।५ पाप ग्रह हो।

११—६।८।१२ में क्रम से शनि, चन्द्र एवं रवि हो या १ में सूर्य, चन्द्र हो।

धनप्रदयोग—

१—लग्नेश २।४।५ स्थानों के स्वामी से युत हो या धनेश चतुर्थेश या पञ्चमेश के साथ हो एवं सुखेश पञ्चमेश का योग हो।

२—लाभेश के साथ धनेश या चतुर्थेश या लग्नेश या पंचमेश हो।

३—दशमेश के साथ लग्नेश, धनेश, लाभेश, चतुर्थेश या पंचमेश हो।

४—भाग्येश के साथ १।२।४।५।१०।११ इन स्थानों के स्वामी हो।

५—धनेश और गुरु १।२।४।७।१० इनमें या धनेश ११ में और लाभेश २ में हो।

६—१।४।७।१०।९।५ इनमें लाभेश हो और ११ में पापग्रह हो।

७—धनेश और लाभेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हो, या उच्च में हो।

८—चन्द्र या लग्न से ३।६।१०।११ में शुभ ग्रह हो या दशमेश लाभेश का योग केन्द्र त्रिकोण में हो।

९—लग्नेश, धनेश और लाभेश का सम्बन्ध हो या ११ में गुरु और ५ में स्वराशि का रवि हो।

१०-लग्न से पञ्चम मिथुन या कन्या राशि में बुध हो एवं ११ में चन्द्रयुक्त मंगल या लग्न से नवम धनु या मीन राशि में गुरु शुक्र हो अथवा पञ्चमेश हो।

धनहीन-योग—

१—चन्द्र केतु लग्न में और लग्नेश ८ में मारकेश से युत दृष्ट हो।

२—लाभेश यदि द्वादशेश, रवि एवं शनि से युत दृष्ट हो एवं पंचमेश ६ में और नवमेश १२ में और धनेश निर्बल हो।

३—धनभाव में मंगल चन्द्र का योग हो और उन्हें बुध या शनि न देखते हो। अथवा द्वितीयस्थ रवि शनि से दृष्ट हो।

४—वृष में रवि, मीन में चन्द्र, कर्क में मंगल और मेष में शनि या केन्द्र में पापग्रह हो और नवमेश द्वादश हो।

५—षष्ठेश के साथ १।२।४।५।७।३।११।८।१२ इनके स्वामी हो या द्वादशेश के साथ हो अथवा चन्द्र से २।१२ में कोई ग्रह न हो और शुभ ग्रह की दृष्टि भी न हो।

अन्धयोग—

शुक्रः सेन्दुस्त्रिकस्थो जनुषि निशि नरः प्राप्नुयादन्धकत्वं
जन्मान्धः सार्कशुक्रस्तनुभवनपतिः स्यात्तदानीं मनुष्यः।
तातानुजाम्बासुतनिजगृहिणीस्थाननाथाः स्थिताश्चे-
दादेश्यं तत्र तेषां प्रवरमतियुतैरन्धकत्वं तदानीम् ॥ ६ ॥

संस्कृत—जनुषि=जन्मकाले, सेन्दुः शुक्रः=चन्द्रसहितशुक्रः, त्रिकस्थः=षष्ठाष्टम-द्वादश-स्थानान्यतमगतः, तदा नरः निशि=रात्रौ, अन्धकत्वं प्राप्नुयात्। एवं सार्क—शुक्रस्तनुभवनपतिः=रविशुक्राभ्यां युतो लग्नेशः, यदि त्रिकस्थस्तदानीं मनुष्यः जन्मान्धः स्यादिति। एवं तदानीं तातानुजाम्बा-सुत-निज-गृहिणी-स्थाननाथाः=दशम-तृतीय-चतुर्थ-पञ्चम-सप्तम-स्थानाधिपाः, चन्द्र-रविशुक्रैः संयुतस्त्रिक-स्थानस्थिताश्चेत्तदा, प्रवरमतियुतैर्दैवज्ञैः, तत्र तेषां =तातादीनां, अन्धकत्वं आदेश्यमिति ॥ ६ ॥

हिन्दी—जिसके जन्म समय में चन्द्र के साथ शुक्र त्रिक (६।८।१२) में हो वह रात में अन्धा होता है। यदि रवि शुक्र के साथ लग्न का स्वामी त्रिक में हो तो जन्मान्ध हो। इसी प्रकार तात (१०), अनुज (३), अम्बा (४), सुत (५), और स्त्री (७), इन भावों के स्वामी यदि चन्द्र, रवि और शुक्र के साथ त्रिक (६।८।१२) में हों तो तीक्ष्णबुद्धिवाले ज्योतिषी को पिता, भाई आदि का अन्धकत्व आदेश करना चाहिये। भाव यह है कि जन्म लग्न से १०।३।४।५।७ ये स्थान क्रम से पिता, भाई, माता, पुत्र और भार्या के होते हैं। इस हेतु जिस स्थान का स्वामी चन्द्र, शुक्र और रवि के साथ त्रिक (६।८।१२) में होगा उस स्थान सम्बन्धि व्यक्ति के लिये अन्धयोग होगा ॥ ६ ॥

उदाहरण—पूर्वलिखित ग्रहस्थिति में स्पष्ट है।

युक्ति—प्रकाशप्रद सूर्य और चन्द्र हैं। काणाशुक्र वीर्याधिपति हैं। अतः शरीर के स्वामी लग्नेश के साथ त्रिक में निर्बली होने पर अन्धयोग बनना युक्ति युक्त है ॥ ६ ॥

सहजभावफलम्—

भ्रातृस्थानेशभौमौ व्ययरिपुनिधनस्थानगौ बन्धुहीनः
स्वक्षेत्रे सौम्यदृष्टे सहजभवनपे मानवः स्याच्च तद्वान् ।
केन्द्रस्थे बन्धुसौख्यं शुभविहगयुते स्याददभ्रं नराणां
पापैश्चेदन्यथैतत्तदनु निजधिया ज्ञेयमित्थं समस्तम् ॥७॥

संस्कृत—भ्रातृस्थानेश-भौमौ=तृतीयेश-कुजौ, व्ययरिपु-निधनस्थानगौ =द्वादशषष्ठाष्टम-स्थानगतौ, (तदा जातः) बन्धुहीनः स्यात्। सहजभवनपे =तृतीयेशे, स्वक्षेत्रे=निजराशौ, सौम्य-दृष्टे=शुभग्रहावलोकिते सति, मानवः तद्वान्=बन्धुवान्, स्यात्। एवं सहजेशे शुभविहगयुते=शुभग्रहयुक्ते, केन्द्रस्थे नराणां अदभ्रं बन्धुसौख्यं=बहुभ्रातृसुखं, स्यात्। तदनु पापैः=पापग्रहैः, युते केन्द्रस्थे सहजेशे चेत्तदा अन्यथा अर्थात् बन्धुसौख्यं न स्यात्। इत्थं निजधिया=स्वबुद्ध्या, समस्तं भावफलं ज्ञेयं=विचारणीयमिति ॥ ७ ॥

हिन्दी—जिसकी जन्मकुण्डली में लग्न से तृतीय स्थान का स्वामी मंगल के साथ लग्न से १२।६।८ में हो वह बन्धुहीन होता है। यदि तृतीयेश अपनी राशि में हो और उसे शुभग्रह देखते हों तो भ्रातृसुख होता है। एवं शुभग्रहों के साथ यदि तृतीयेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो विशेष बन्धु सुख हो। यदि पापग्रहों के साथ तृतीयेश केन्द्र में हो तो बन्धु सुख न हो। उक्त योगों में शुभ युत दृष्ट में शुभयोग की और पाप युत दृष्टि में अशुभ योग की अभिवृद्धि जाननी चाहिये। श्लोक में केवल शुभ या पाप युत कहा है ॥ ७ ॥

युक्ति—नैसर्गिक भ्रातृ कारक मंगल है और लग्न से तृतीय स्थान सहज का है। इस हेतु भ्रातृकारक और भ्रातृ स्थान का अधिपति का सम्बन्ध शुभ-स्थान में शुभग्रह की दृष्टि में होने पर भ्रातृ सुख और इसके विपरीत भ्रातृ सुखाभाव होना उचित ही है ॥ ७ ॥

वि०—भ्रातृभगिनी संख्या विचार—तृतीयेश की राशि संख्या या नवांश संख्या अथवा कारक ग्रह की नवांश संख्या तुल्य भाई बहन की संख्या होती है। नवम भाव के पुरुष एवं स्त्री ग्रहों के अनुसार या नवमांश संख्या में पुरुष स्त्री राशि के अनुसार संख्या कहीं गयी है। वक्र उच्च में त्रिगुणित स्वक्षेत्र में द्विगुणित एवं नीच तथा शत्रु क्षेत्र में अर्ध संख्या होती है।

भ्रातृ सुख योग—तृतीय भाव शुभयुत दृष्ट हो एवं तृतीयेश बली हो तथा तृतीयेश से सहज भाव युत दृष्ट हो अथवा सहजेश और भ्रातृकारक पुरुष-राशि की नवांश में हो और रवि, मंगल गुरु से दृष्ट हो तो भ्रातृ सुख अन्यथा भगिनी सुख हो। लग्न और लग्नेश से ३।११ में बुध, चन्द्र, मंगल एवं गुरु हो तो भ्रातृ सुख और केतु से भगिनी सुख हो।

भ्रातृ हानि योग—तृतीयेश और मंगल ६।८।१२ में हो अथवा पाप से युत दृष्ट हो एवं कारक निर्बली हो या तृतीय और तृतीयेश पापग्रह के बीच हो, नीच शत्रु एवं पापषड्वर्ग में हो और मंगल से तृतीय में पाप ग्रह हो तो भ्रातृ-सुखाभाव होता है।

सुखभावफलम्—

पातालेशः स्वराशौ शुभखचरयुतो भाग्यनाथेन युक्तः
सामन्तः स्यात्ततश्चेत्सुरपतिगुरुणा वाहनेशस्तनुस्थः ।

संदृष्टो राजपूज्यस्तदनु च हिबुकाधीश्वरो लाभसंस्थो
यानं पश्यन्नराणां निवहमभिमतं वाहनानां प्रदत्ते ॥ ८ ॥

संस्कृत—भाग्यनाथेन युक्तः=नवमेशेन सहितः, पातालेशः=चतुर्थेशः, स्वराशौ=निजगेहे, शुभ-खचर-युतः=शुभग्रहो युतः, स्यात्तदा जातः सामन्तः=माण्डलिकः, स्यात्। तवः चेद् वाहनेशः=सुखेशः, तनुस्थः=लग्नगतः, सुरपति-गुरुणा सन्दृष्टः=पूर्ण-दृष्ट्याऽलोकितः, तदा राजपूज्यः=नृपवन्द्यः, स्यात्। तदनु च गुरुदृष्टः हिबुकाधीश्वरः=चतुर्थेशः, लाभ संस्थः=एकादशगतः, वा गुरुदृष्टश्चतुर्थेशः यानं=चतुर्थ-थानं पश्यन् भवति तदा नराणां अभिमतं=अभिलषितं, वाहनानां निवहं=समूहं, प्रदत्ते ॥ ८ ॥

हिन्दी—नवमेश के साथ चतुर्थेश यदि अपनी राशि में शुभ ग्रह से युत हो तो जातक माण्डलिक (राजा) होता है। यदि चतुर्थेश लग्न में हो और उसको पूर्णदृष्टि से गुरु देखता हो तो मनुष्य राजपूज्य होता है। एवं गुरुदृष्ट चतुर्थेश लग्न से एकादश में हो या किसी स्थान में रह कर चतुर्थ स्थान को देखता हो तो मनुष्य के लिये अभिलषित वाहन देता है। लाभस्थान से चतुर्थ षष्ठ स्थान होता है अतः लाभस्थ चतुर्थेश की दृष्टि उस पर न पड़ेगी, इस कारण दो योग कहे गये हैं ॥ ८ ॥

उदाहरण—यथा मेषलग्न होने से नवमेश गुरु यदि लग्न से चतुर्थ (सुख) राशि कर्क का स्वामी चन्द्र के साथ कर्क में होने से प्रथम योग, यदि चन्द्र लग्न में और गुरु धन राशि या सिंह में हो तो सुख स्थान पर उनकी दृष्टि होने से द्वितीय योग, चन्द्र मेष लग्न में धनु राशिस्थ गुरु की दृष्टि से तृतीय, कुम्भ राशि में चन्द्र पर तुलराशिस्थ गुरु की दृष्टि से चतुर्थ और मकर में चन्द्र पर कन्या राशिस्थ गुरु की दृष्टि होने से तथा सुखेश चन्द्र से कर्क राशि दृष्टि होने के कारण पञ्चम योग जानना चाहिये ॥ ८ ॥

युक्ति—सुख का हेतु भाग्य है अतः भाग्येश सुखेश का योग निज भवन में शुभ युत होने पर राजयोग बनना उचित है। देव गुरु दृष्ट सुखेश का प्रभाव शरीर पर पड़ने से परम धार्मिक होने के कारण राजपूज्य योग होना संगत है। चतुर्थ भाव वाहन का भी है अतः लाभस्थ सुखेश हो या सुखभावपर दृष्टि हो तो वाहन लाभ होगा ॥ ८ ॥

गृहप्राप्त्यादियोगा।

स्वक्षेत्रे तुर्यनाथस्तनुपतिसहितः स्यादकस्माद् गृहाप्तिः
सौहार्दं वा सुहृद्भिस्तदितरगृहगश्चेद् गृहालभ्ययोगः
यावन्तः पापखेटा धनदशमगृहप्रान्त्यपैश्चेत्त्रिकस्था
युक्तास्तावत् प्रमाणा ज्वलनवशगताः क्लेशदाः स्युर्गृहानुः ॥९॥

संस्कृत—तनुपतिसहितः = लग्नेशयुक्तः, तुर्यनाथः = चतुर्थेशः, स्वक्षेत्रे = निजभवने, तदा अकस्माद् गृहाप्तिः = भवनलाभः, स्यात्। वा सुहृद्भिः = मित्रजनैः, सौहार्दं = प्रीतिः स्यात्। चेद् तदितरगृहगः = स्वगृहादन्यत्रगतः, तदा गृहालभ्य-योगः स्यात्। यावन्तः, पापखेटाः = अशुभग्रहाः, धनदशमगृहप्रान्त्यपैः = द्वितीय—दशम—चतुर्थ—द्वादशस्थानाधिपैः, युक्ताः = सहिताः, त्रिकस्थाः = षष्ठाष्टमद्वादशगताः, तावत्प्रमाणाः गृहाः नुः = नरस्य, ज्वलन वशगताः = अग्न्याधीनगताः, भवन्त्यतः क्लेशदाः = दुःखप्रदाः, स्युरिति ॥ ९ ॥

लग्नेश के साथ सुखेश अपनी राशि में हो तो विना प्रयत्न से गृहलाभ हो तथा मित्रों के साथ अच्छी मैत्री हो। श्लोक का वा पद एक का निश्चित लाभ का द्योतक है। यदि लग्नेश के साथ सुखेश स्वक्षेत्र में न हो अर्थात् शत्रुक्षेत्रादिमें हो, तब गृहलाभ नहीं होता है जितने पापग्रह २।१०।४।१२ इन स्थानों के स्वामी से युक्त होकर त्रिक (६।८।१२) में हों, उतने घर जलने से कष्टद होते हैं ॥ ९ ॥

वि०—पूर्व टीका कारों ने इतर स्थान का अर्थ चतुर्थ से भिन्न किया है वह विचारणीय है। उच्च, मित्रभवन एवं मूलत्रिकोण में ग्रहों का फल शुभ होता है। अतः इतर का अर्थ शत्रुक्षेत्र, नीच एवं त्रिक होना चाहिये। एक ग्रह दो राशियों का स्वामी है अतः सुखेश का निजभवन चतुथ और दूसरा भी होगा। चतुर्थ की अपेक्षा अन्य राशि में सुखेश का फल गौण होगा।

युक्तिः—लग्नसे चौथा स्थानसे घर, वाहन, मित्र, माता एवं सुखका विचार होता है। लग्नेश शरीर का स्वामी है इस हेतु लग्नेश से युत सुखेश स्वगृही का होने से गृहादिलाभ होना उचित ही है। शत्रु क्षेत्रादि में होने से तथा पापाक्रान्त

होने से विपरीत फल देना स्वाभाविक है। चतुर्थ का लाभ स्थान, सप्तम (शक्ति) स्थान और भाग्यस्थान क्रम से २।१०।१२ होने से उन स्थानों के अधिप पाप युक्त होकर त्रिक में रहने से पापग्रहजनित अग्निभय कहा गया है ॥ ९ ॥

वाहन-विनाश-योगो

यावन्तो वाहनस्थाः शुभविहगदृशां गोचरा नो भवेयु-
स्तावन्तो वा विरामाः परमगुणवतां वाहनानां नृणां स्युः ।
क्रूराः पश्यन्ति यानं व्ययनिधनगताश्चेत्तदा तद्वदेव
प्राज्ञैरादेश्यमेषां खलु शुभकरणं शान्तिकं वाहनानाम् ॥१०॥

संस्कृत—वाहनस्थाः=चतुर्थभवनस्थिताः, यावन्तः क्रूरग्रहाः शुभविहगदृशां गोचराः=शुभग्रहदृष्टाः, नो भवेयुः, तावन्तः, नृणां=मानवानां, परमगुणवतां=उत्कृष्टगुणयुक्तानां, वाहनानां, विरामाः=विनाशाः, स्युरिति। वा चेद् व्ययनिधनगताः=द्वादशाष्टमस्थाः (यावन्तः) क्रूराः=पापग्रहाः, यानं=चतुर्थभवनं, पश्यन्ति=अवलोकयन्ति, तदा तद्वदेव, अर्थात् तावन्तो वाहनानां विनाशाः स्युरिति। तदर्थं प्राज्ञैः, एषां वाहनानां खलु=निश्चयेन, शुभकरणं=कल्याणप्रदं, शान्तिकं=शान्तिकर्म, आदेश्यं=विधेयमिति ॥१०॥

हिन्दी—जिसकी जन्मकुण्डली मे जन्मलग्न से चौथे घर में शुभदृष्टिरहित जितने पापग्रह हों उतने उनके उत्तमगुण वाले वाहन विनष्ट होते हैं। अथवा जितने पापग्रह १२।८ में रहकर चौथे भाव को देखें उतने वाहन विनाश होते हैं। इसलिये इन योगों में प्राज्ञजन वाहनों की शुभदशान्ति का आदेश करें ॥ १० ॥

युक्तिः—चतुर्थ स्थान वाहन का है अतः शुभदृष्टि रहित पापग्रह चतुर्थ में होने पर वाहन के लिये अशुभ होगा। षष्ठ स्थान स्थिति पाप अरिष्ट नाशक होते हैं अतः उसे छोड़ कर द्वादश, अष्टम में स्थित बली पापग्रह की दृष्टि वाहन स्थान में होगी तो वाहन-विनाश होना युक्ति संगत है। इसमें युक्ति यह है कि

वाहन स्थान से नवम और पञ्चम १२।८ स्थान होते हैं। नवम धर्म और पंचम विद्या का स्थान है। इस हेतु जिनके शरीर, धर्म एवं विद्या पापाक्रांत होंगे वे जीवित नहीं रह सकते अतः द्वितीय योग कहा गया है ॥१०॥

वि०—सुखद योग—

१—शुभदृष्टि लग्नस्थ शुभग्रह पापरहित हो तथा गुरु दृष्ट सुखेश हो।

२—सुखेश शुभयुक्त होकर १।४।७।१०।९।५ में हो और सुख पर दृष्टि हो।

३—सुखेश एवं सुखस्थान शुभग्रह के बीच हो और बली गुरु से युत सुखेश हो।

४—लग्नेश वर्गोत्तमनवांश, स्वक्षेत्र, स्वोच्च एवं निजषड्वर्ग में हो तथा सुखेश बली के साथ सम्बन्ध रखता हो।

५—लग्न से १।२।३।४ में शुभग्रह हो या लग्न में शुक्र हो तो आयु के पूर्वार्द्ध में सुख, लग्नेश गुरु के साथ केन्द्र में हो तो युवावस्था में २ में पाप १।४।७।१० में शुभ होने से परार्द्ध में सुख होता है।

पञ्चमभावफलम्

विद्यास्थानाधिपो वा बुधगुरुसहितश्चेत् त्रिके वर्तमानो
विद्याहीनो नरः स्यादथ नवमनिजक्षेत्रकेन्द्रेषु तद्वान्।
बालत्वं वृद्धता वा यदि गगनसदां जन्मकाले तदा स्यात्
प्रज्ञामान्द्यं नराणामथ यदि विहगः स्वर्क्षगो दोषहृत् स्यात्॥११॥

संस्कृत—विद्यास्थानाधिपः=पञ्चमेशः, वा बुधगुरुसहितः पञ्चमेशः चेद् त्रिके वर्त्तमानः=षष्ठाष्टमद्वादशभावगतः, तदा नरः विद्याहीनः स्यात्। अथ यदि पञ्चमेशः नवमनिजक्षेत्र-केन्द्रेषु स्थितः, तदा जातकः तद्वान्=विद्यावान् भवति। यदि जन्मकाले गगनसदां=गृहाणां बालत्वं, वा वृद्धता=वृद्धत्वं, स्यात्तदा नराणां प्रज्ञामान्द्यं=मन्द बुद्धिः, स्यात्। अथ यदि विहगः=ग्रहः, स्वर्क्षगः=निजभवनगतः, तदा दोषहृत् स्याद्=मन्द-बुद्धित्वजन्य—दोष विनाशको भवतीत्यर्थः॥११॥

हिन्दी—जन्मलग्न से पञ्चम स्थान का स्वामी अथवा बुध-गुरु के साथ पञ्चमेश यदि त्रिक (६।८।१२) में हो तो विद्याहीन हो। यदि पञ्चमेश लग्न से नवम या स्वराशि या केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो जातक विद्वान होता है। जन्म काल में विद्याकारक ग्रह बाल्यावस्था या वृद्धावस्था में हों तो मनुष्य मन्द बुद्धि होता है। यदि योग कारक ग्रह अपनी राशि में हों तो दोष नाशक होते हैं ॥११॥

वि०—ग्रहों की प्रत्येक राशि में बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत के भेद से पाँच अवस्थायें होती हैं। यह विषम राशि में क्रम से छह छह अंशों के विभाग से त्रिक और समराशि में विपरीत क्रम अर्थात् विषम में बलादि अवस्था के क्रम से और सम में मृत, वृद्ध, उभार और बाल के क्रमानुसार अवस्थायें होती हैं।

युक्तिः—विद्यास्थानाधिप के सबल होने पर विद्या की अभिवृद्धि और निर्बलता में विद्या की हानि युक्तिसंगत है अतः पंचमेश त्रिक में रहने से विद्या-हानि एवं केन्द्रादि में रहने से विद्याप्राप्ति कहे गये हैं। शेष स्पष्ट हैं।

मूकसन्तानाभावयोगौ

वाक्स्थानेशो गुरुर्वा व्ययरिपुविलयस्थानगो वाग्विहीन-
श्चैवं पित्रादिकानां पतय इह युता मूकता स्याच्च ताभ्याम्।
वागीशात् पञ्चमेशस्त्रिकभवनगतः पुत्रधर्माङ्गनाथा
रन्ध्रे द्वेष्यान्तिमस्था यदि जनुषि नृणामात्मजानामभावः ॥१२॥

संस्कृत—वाक्स्थानेशः = पञ्चमेशः, वा गुरुः, व्ययरिपुविलय-स्थानगः = द्वादशषष्ठाष्टमस्थः, तदा जातः वाग्विहीनः = मूकः स्यात्। एवं पित्रादिकानां = पित्रादिभावानां, पतयः = स्वामिनः, ताभ्यां = पञ्चमेश-गुरुभ्यां, युताः (सन्तः) इह (उक्तस्थानेषु), स्थिताश्चेत्तदा पित्रादिकानां मूकता = मूकत्वं, स्यात्। यदि जनुषि = जन्मकाले, वागीशात् = बृहस्पतेः, पञ्चमेशः = पञ्चमस्थानाधिपः, त्रिक भवनगतः = षष्ठाष्टम-द्वादश-स्थानान्यतमस्थान-स्थितः, पुत्रधर्माङ्ग-

नाथाः = पञ्चमनवमलग्नस्थानेशाः, रन्ध्रद्व्यान्तिमस्थाः = अष्टमषष्ठद्वादशस्थानगताः, तदा नृणां = नराणां, आत्मजानां = पुत्राणां, अभावः स्यादिति ॥ १२ ॥

हिन्दी—जिसकी जन्म कुण्डली में पञ्चमेश अथवा गुरु त्रिक (१२।६।८) में हो वह मूक (गूँगा) होता है। इसी तरह पितृ (१०), भ्रातृ (३), मातृ (४), जाया (७) और पुत्र (५) स्थानों के स्वामी यदि अपने पञ्चमेश और गुरु से युत होकर त्रिक में रहें तो वे मूक होते हैं। अर्थात् यदि पितृस्थान दशम का स्वामी अपने पञ्चमेश और गुरु के साथ त्रिक (६।१२।८) में रहेगा तो जातक का पिता मूक होगा। इसी तरह अन्य भावों का विचार जानना चाहिये। गुरु से पञ्चम स्थान का स्वामी यदि त्रिक (६।८।१२) स्थान का में हो और लग्न से पञ्चम और नवम स्थान के स्वामी एवं लग्नेश यदि त्रिक (८।६।१२) में हो तो मनुष्य पुत्र हीन होता है ॥ १२ ॥

उदाहरण—एक व्यक्ति की कुण्डली में वृष लग्न है और कन्या में गुरु तुला में बुध, वृश्चिक में चन्द्र रवि, धनु में शनि शुक्र, मकर में मंगल और कुम्भ में राहु है। यहां वृष से पंचम कन्या राशि का स्वामी बुध लग्न से ६ में है तथा गुरु से पंचम स्थान का स्वामी शनि ८ में और पञ्चमेश बुध, लग्नेश शुक्र और नवमेश शनि क्रम से लग्न से ६।८ में है अतः पुत्राभाव योग स्पष्ट है। इसी तरह से पिता आदि का विचार करना चाहिये ॥ १२ ॥

युक्ति—गुरु वाणी का अधिपति है और विद्या स्थान का स्वामी पञ्चमेश है इस हेतु इनकी दुर्बलता से मूकयोग होना उचित है। नैसर्गिक पुत्रकारक गुरु हैं और लग्न से पञ्चम पुत्र स्थान है इस लिये दोनों से पुत्र भाव का विचार करना युक्ति संगत है। शरीर से धर्म और धर्म से पुत्र सुख होता है अतः लग्नेश नवमेश और पञ्चमेश के बली रहने पर ही पुत्र सुख और दुःस्थान में निर्बली होने से पुत्र सुखाभाव होना उचित है। अपूर्ण योग में उपाय द्वारा पुत्र सुख होता है ॥ १२ ॥

विशेषपुत्राभावयोगः—

लग्नेश और बुध ४।७।१० में एवं ५।८।१ में पाप ग्रह हो अथवा लग्न में चन्द्र गुरु, सप्तम में शनि या मंगल या चतुर्थ में पापग्रह हो अथवा ५।८।१२

में पापग्रह वा ५ में चन्द्र, १।८।१२ में पापग्रह या ७ में बुध शुक्र, ४ में पाप ५ में गुरु हो। या चन्द्र से ८ में पाप, या ५ में सभी पापग्रह, अथवा ७ में शुक्र १० में चन्द्र ४ में पाप या लाभ में मंगल, ८ में शनि ५ मे रवि, या पञ्चमेश १।७ में हो और वली षष्ठेश से युत दृष्ट हो, या शनिमंगल ६।१० में या शुक्र के साथ शनिमंगल ७ में या लग्नेश मेष वृश्चिक का हो और पञ्चमेश ६ में हो या द्वादशेश १।१० मे या पञ्चमभाव पर शुक्रमंगल की दृष्टि न हो तथा ११ मे शनि चन्द्र के योग पुत्राभाव के द्योतक हैं।

पुत्रप्रदयोगः—

शुभ युत दृष्ट लग्नेश और पञ्चमेश १।४।७।१० मे हो तथा धनेश वली हो अथवा नवमेश-लग्नेश ७ मे और धनेश १ में या पञ्चमेश और लग्नेश में स्थान सम्वन्ध या दृष्टि सम्वन्ध हो वा वली धनेश ५ में गुरु से दृष्ट हो या पञ्चमेश तथा पुत्रकारक वली हो और शुभ युत दृष्ट हो अथवा पञ्चमेश, लग्नेश, नवमेश और गुरु के नवमांशेश शुभ युत दृष्ट होकर १।४।७।१० में हो तो पुत्र सुख होता है।

सन्तानयोगाः

किञ्चित्कालं विलम्वः शुभखगसहितास्तेऽथ कर्के सुतर्क्षे
चन्द्रे कन्याप्रजावान् प्रमित-तनयवांश्चाथ देवेन्द्रपूज्यात्।
क्रूरश्चेत् पञ्चमस्थःगुरुरपि सुतगः स्यात्तदाऽपत्यहीन-
श्छायापुत्रः स्वगेहाद् यदि भवति सुते सूनुरेकस्तदानीम्॥१३॥

संस्कृत—ते (पुत्रधर्माङ्गनाथाः) शुभखगसहिताः=शुभग्रहयुताः, (चेत्तदा) किञ्चित्कालो विलम्वः विलम्वात्पुत्रलाभो भवतीत्यर्थः। अथ सुतर्क्षे=पञ्चमभावे, कर्के=कर्कराशौ, चन्द्रे सति जातकः कन्या प्रजावान् प्रमित—तनयवान्=स्वल्पसन्ततिवान्, च स्यात्। यदि देवेन्द्र-पूज्यात्=गुरोः, पञ्चमस्थः क्रूरः=पापग्रहः, गुरुरपि सुतगः=पञ्चमभावस्थः, चेत्तदापत्यहीनः=सन्तानरहितः, स्यात्। छायापुत्रः=शनिः, यदि स्वगेहात्=निजराशितः, सुते=पञ्चमभावे, भवति तदानीं एकः सूनुः=पुत्रः, स्यादिति॥ १३॥

हिन्दी—लग्नेश, पंचमेश और नवमेश यदि शुभग्रह से युक्त हो तो विलम्ब से पुत्र सुख होता है। यदि पंचमभाव में कर्क राशि हो और उस में चन्द्रमा हो तो विशेष कन्यायें होती है। यदि गुरु से पंचमभाव में पापग्रह हों और गुरु लग्न से पंचम में हो तो मनुष्य सन्तान रहित होता है। शनि अपनी मकर या कुम्भ राशि से पंचम अर्थात् वृष या मिथुन में होने से एक पुत्र होता है ॥ १३ ॥

वि०—अन्तिम योग में जब शनि वृष या मिथुन राशि में रहेंगे तब सभी कुण्डली में अपनी राशि से पंचम हो जायगें अतः योग की विशेषता न रहेगी। इस हेतु लग्न स्थिति अपनी राशि से पंचम में शनि होने से उक्त योग मानना, उचित जान पड़ता है।

युक्ति—चन्द्र एवं कर्क राशि स्त्री कारक हैं अतः इनके सम्बन्ध से कन्या प्रद योग होना उचित है। शेष की युक्ति पूर्व कथित है ॥

अन्य सन्तानयोगाः—

कुम्भे चेत् पञ्च पुत्रास्तदनु च मकरे नन्दनेऽप्यात्मजाः स्यु-
स्तिस्रो भौमः सुतानां त्रितयमथ सुतादायको रौहिणेयः।
इत्थं काव्यः शशाङ्को जनुषि च गुरुणा केवलेनैव पुत्राः
पञ्च स्युः केतुराह्वोः क्रियवृषभवने कर्कटे नो विलम्बः ॥१४॥

संस्कृत—शनिश्चेद् नन्दने=पञ्चमे, कुम्भे=कुम्भराशौ, भवेत्तदा पञ्चपुत्राः स्युः। तदनु च मकरेऽर्थात् पञ्चमभावगतमकरराशौ शनिश्चेत्तदा तिस्र आत्मजाः=कन्यकाः, भवन्ति। तत्रस्थः=पञ्चमभावगतमकरराशिगतः, भौमश्चेत्तदा सुतानां=कन्यकानां, त्रितयं=त्रयं, इत्थं जनुषि=जन्मकाले, रौहिणेयः=बुधः, काव्यः=शुक्रः वा शशाङ्कश्चन्द्रो भवेत्तदा सुतादायकः=कन्याप्रदः, स्यात्। केवलेन गुरुणा पञ्चपुत्राः स्युः। एवं पञ्चमभावे क्रयवृषभवने=मेषवृषराशौ, कर्के वा केतुराह्वोरेकतरे स्थिते सति सन्तानलाभे न विलम्बो भवति ॥ १४ ॥

हिन्दी—लग्न से पंचम कुम्भ राशिगत शनि होने से पाँच पुत्र और मकर राशि गत पंचम भाव में शनि हो अथवा मंगल हो तो तीन कन्यायें हो। इस तरह जन्मकाल में बुध, शुक्र और चन्द्र कन्याप्रद होते हैं। अकेला गुरु पंचम भाव में हो तो पाँच पुत्र हो। यदि मेष, वृष या कर्क राशि पंचम भाव में हों और उसमें राहु या केतु हों तव सन्तानप्राप्ति में विलम्ब नहीं होता ॥१४॥

वि०—शनि कृत प्रथम और द्वितीय योग प्रत्येक २५–३० वर्ष के भीतर होगा क्योंकि एक राशि में शनि ढाई वर्ष रहते हैं अतः तीस वर्षों में बारहो राशियों को भोग करते हैं। इस हेतु जिस राशि में शनि रहेंगे उसमें फिर प्रत्येक तीस वर्ष के बाद ही जाते हैं।

युक्ति—चन्द्र, बुध और शुक्र स्त्रीकारक होने से कन्याप्रद हैं। बुध और शनि नपुंसक हैं परन्तु व्यवहार में स्त्री और पुरुष के दो विभाग हैं। इस कारण स्त्रीकारक चन्द्रने अपने पुत्र बुध को अपने पक्ष में और पुरुष कारक सूर्यने अपने पुत्र शनि को निज पक्ष में मिला लिया। अतः सूर्य, शनि, मंगल और गुरु पुत्रकारक हैं। पुरुष स्त्री के घर में जाने से परतन्त्र होने के कारण स्त्री धर्म ग्रहण कर लेता है। अतः स्त्री राशि मकरस्थ शनि या मंगल कन्याप्रद एवं पुरुष–राशि कुम्भस्थ पुत्रप्रद बताया है। गुरु ज्ञानी होने से निजधर्म से बिचलित नहीं होते इस हेतु गुरु पुत्रप्रद कहा गया है। मेष रक्त, वृष वीर्य और कर्क रस है तथा राहु केतु वायु कारक हैं। वायु रसादि धातुओं का संचालक है अतः संचालित शुद्ध पुत्र स्थानीय रसादि से सन्तान होने में विलम्ब न होना उचित ही है ॥ १४ ॥

प्रथम पुत्र या कन्या जन्म का ज्ञान—

जिसकी कुण्डली में लग्नेश १।२।३ में हो तो प्रथम पुत्र वाद में कन्या और पुत्र जानें। चन्द्र, मंगल और शुक्र द्विस्वभाव (३।६।९।१२) राशि में होने से पुत्रप्रद एवं पंचमेश पुरुष ग्रह पुरुष राशि में पुरुष राशि के नवांश में होने से पुत्र प्रद विपरीत में कन्या प्रद होते हैं। ११ में पाप और ५ में चन्द्र शुक्र का योग कन्या प्रद है और पंचम में समराशि एवं सम नवांश में शनि बुध का योग तथा शुक्र चन्द्र का सम्बन्ध कन्या प्रद है। इसके विपरीत पुत्र जानना चाहिये।

सन्तानलाभे वर्षज्ञानम्—

पापो वा वासवेज्यः सुखभवनगतः पञ्चमे वाऽष्टमे वा
शीतांशुः सन्ततेः स्यात् खगुणमितसमातुल्य एव प्रबन्धः ।
यावन्तः पापखेटास्तनयगृहगताः सौम्यदृष्ट्या न दृष्टा-
स्तावद्वर्षप्रमाणो नियतमिह भवेत् सन्ततेर्वा विलम्बः ॥१५॥

संस्कृत— पापः = पापग्रहः, वा सुरेज्यः = गुरुः, सुखभवनगतः = चतुर्थस्थः, शीतांशुः = चन्द्रः, पञ्चमे वा अष्टमे स्यात्तदा स्वगुणमितसमातुल्य एव = त्रिंशद्वर्षपर्यन्तं, प्रबन्धः = सन्तानलाभे प्रतिबन्धो भवति । अथवा यावन्तः पापखेटाः = पापग्रहाः, सौम्यदृष्ट्या वियुक्ताः = शुभदृष्टिरहिताः, तनयगृहगताः = पुत्रभावस्थाः, तावद्वर्षप्रमाणाः = तावत्संख्यकवर्षतुल्यः, नियतं = निश्चितं इह = अस्मिन् योगे, सन्ततेर्विलम्बः स्यादिति ॥ १५ ॥

हिन्दी—जन्म काल में यदि पापग्रह या गुरु चतुर्थ में हो और चन्द्र ५।८ में हो तो ३० वर्ष तक सन्तान प्राप्ति में बाधक होता है । अथवा जितने पापग्रह शुभ दृष्टि से रहित होकर सन्तानभाव (५) में हो, उतने वर्ष पर्यन्त विलम्ब होता है । इसके विपरीत में अर्थात् ५ में जितने शुभ ग्रह हों या उनकी दृष्टियाँ जितनी हों उतने वर्ष में सन्तान होती है ॥ १५ ॥

सन्तानोपायः—

तत्प्राप्तिर्धर्ममूला तदनु बुधकवी शङ्करस्याभिषेका-
च्चन्द्रश्चेत्तद्वदेव त्रिदिवपतिगुरुर्मन्त्र यन्त्रौषधीनाम् ।
सिद्ध्या मन्दारसूर्या यदि शिखितमसी तत्र वंशेशपूजा
कार्याऽऽम्नायोक्तरीत्या बुधगुरुनवपाः क्षिप्रमेवात्र सिद्धिः॥१६॥

संस्कृत—तत्प्राप्तिः = सन्तानप्राप्तिः, धर्ममूला = श्रुतिस्मृतिप्रतिपादित कर्मानुष्ठानहेतुभूता, (अस्ति) तदनु–बुधकवी (प्रतिबन्धकौ चेत्तदा) शंकरस्याभिषेकात् सन्तान प्राप्तिर्भवति । चन्द्रश्चेद्वदेव = पूर्ववदेवोपायः । त्रिदिवपति गुरुश्चेत्तदा मन्त्रयन्त्रौषधीनां सिद्ध्या मन्त्रानुष्ठानेन यन्त्रधारणेन औषधि

सेवनेन च सन्ततिलाभः स्यात्। यदि मन्दारसूर्या शिखितमसी अर्थात् शनि-मंगल-रवि-केतु-ग्रहाणां मध्ये कस्यचित् प्रतिबन्धकः स्यात्तदा तत्र आम्नायोक्त-रीत्या श्रुतिस्मृतिर्दर्शित-मार्गेण गंशेशपूजा=कुलदेवतापूजा, कार्या। अत्र यदि बुधगुरुनवपाः प्रतिबन्धकास्तदा पूर्वोक्तानुष्ठानेनैव क्षिप्रमेव सिद्धिः, स्यादिति ॥ १६ ॥

हिन्दी—सन्तान प्राप्ति में प्रतिबन्धक योग होने से शास्त्र वर्णित षष्ठी, प्रदोष, आदित्य सप्तमी व्रत, शंकर की आराधना सन्तान गोपाल मंत्र जप एवं हरिवंशादि श्रवण कर्म से सन्तान होती है। अतः पुत्र प्राप्ति में धर्म कारण कहा गया है। यदि बुध, शुक्र एवं चन्द्र बाधक हो तो शंकर पर अभिषेक, गुरु में मन्त्र, यन्त्र और औषधि सेवन, शनि, मंगल, रवि, केतु, एवं राहु में शास्त्र विधि से कुलदेवता की पूजा और बुध, गुरु एवं नवमेश में सदनुष्ठान देवी आराधना प्रभृति से शीघ्र सन्तान प्राप्ति हो ॥ १६ ॥

रिपुभावफलानि—

षष्ठेशे पापयुक्ते तनुनिधनगते नुः शरीरे व्रणाः स्यु-
श्चादेश्यं तज्जनित्रीजनकसुतवधूबन्धुमित्रादिकानाम्।
इत्थं तत्स्थानगामी शिरसि दिनमणिश्चानने शीतभानुः
कण्ठे भूमीतनूजो हृदि शशितनयो वाक्पतिर्नाभिमूले ॥१७॥

संस्कृत—पापयुक्ते षष्ठेशे तनुनिधनगते=लग्नाष्टमस्थे, सति नुः=नरस्य, शरीरे व्रणाः स्युः। इत्थं, तज्जनित्री-जनकसुतवधू-बन्धु-मित्रादिकानां=तस्य जातकस्य मातृ (४), पितृ (१०), पुत्र (५), वधू (७), बन्धु (३), मित्र (४), प्रभृतिनां, षष्ठेशवशात्फलमादेश्यम्। तत्र तत्स्थानगामी लग्नाष्टमगतः षष्ठेशः दिनमणिः=सूर्यश्चेत्तदा शिरसि व्रणः स्यात्। शीतभानुश्चन्द्रश्चेत् आनने=मुखे भूमीतनुजः=कुजश्चेत्तदा, कण्ठे, शशि-तनयः=बुधः, चेत् हृदये, वाक्पतिश्चेत्तदा नाभिमूले व्रणाः भवन्तीति ॥१७॥

हिन्दी—पापयुत षष्ठेश १।८ में होने से जातक के शरीर में व्रण होता है। इसी तरह जननी (४), जनक (१०). सुत (५), वधू (७)

वन्धु (३), और मित्र (४) स्थानों का षष्ठेश पापयुत होकर लग्न (१), या अष्टम (८), में हो तो स्थानानुसार माता आदियों के शरीर में व्रण (घाव) कहना चाहिये। उनमें षष्ठेश रवि से शिरपर, चन्द्र से मुखपर, मंगल से कण्ठ में, बुध से हृदय में और गुरु से नाभि मूल में व्रण होते हैं ॥१७॥

वि०—पूर्व टीकाकारों ने लिखा है कि मातृ प्रभृति स्थानों के स्वामी यदि पापयुत १।८ में हों तो उन लोगों को व्रण कहना चाहिये, यह संगत नहीं है। लग्न शरीर है और षष्ठ स्थान रोग का है अतः मातृ प्रभृति स्थानों का जो षष्ठेश हो उससे विचार करना युक्ति संगत है।

युक्ति—रिपु, रोग एवं व्रण आदि का विचार षष्ठ स्थान से होता है, इसलिये पाप युत षष्ठेश शरीर या मृत्युभाव पर रहने पर व्रण जन्य पीड़ा-कारक होगा। शरीर में ग्रहों के अपने अपने स्थान के अनुसार व्रण कहना भी युक्ति संगत है ॥ १७ ॥

अन्य योगाः—

नेत्रे पृष्ठे च शुक्रो दिनकरतनयः स्यात् पदे चाधरे चेत्
केतुर्वा सैंहिकेयस्तदनु तनुपतिर्भौमवित्क्षेत्रसंस्थः।
आभ्यामालोकितः सन् भवति हि कतिचित्स्थानगो वा तदानीं
नेत्रे रोगी नरः स्यात् प्रवरमतियुतैर्होरिकैर्ज्ञेयमेवम् ॥१८॥

संस्कृत—शुक्रश्चेत्षष्ठेशः लग्नाष्टमगतस्तदा नेत्रे पृष्ठे च, दिनकरतनयः= शनिः, चेत्, पदे=चरणे, केतुर्वा सैंहिकेयः=राहुः, चेत्तदा अधरे=ओष्ठे, व्रणाः स्युरिति पूर्वेण सम्बन्धः। अथ यदि तनुपतिः=लग्नेशः, भौमवित्क्षेत्र संस्थः=कुजबुधराशिगतः, आभ्यां=कुजबुधाभ्यां- आलोकितः=दृष्टः, वा तदनु लग्नपतिः ताभ्यां दृष्टः सन् कतिचित् स्थानगः=यत्र कुत्रापि स्थितः, तदानीं नरः नेत्र रोगी स्यात्! एवं प्रवरमतियुतैः=तीक्ष्णबुद्धिवद्भिः होरिकैः=दैवज्ञैः, ज्ञेयम् ॥ १८ ॥

हिन्दी—यदि षष्ठेश शुक्र लग्न या अष्टम में हो तो नेत्र और पृष्ठ पर, एवं शनि से पैर पर तथा केतु या राहु से ओष्ठ पर व्रण होते हैं।

यदि लग्नेश मंगल या बुध की राशि में अर्थात् मेष, वृश्चिक, मिथुन या कन्या में हो और मंगल बुध से देखा जाय अथवा लग्नेश किसी राशि में होकर मंगल बुध से देखा जाय तो मनुष्य नेत्र रोगी होता है। इस तरह तीक्ष्ण बुद्धि वाले ज्योतिषी को जानना चाहिये ॥ १८ ॥

षष्ठेशे लग्नयाते भवति हि मनुजो वैरिहन्ता धनस्थे
पुत्रात्तार्थोऽतिदुष्टः सहजभवनगे ग्रामदुःखाकरः स्यात्।
नाभिस्थाने च रोगी तनुनिधनपती शत्रुभावस्थितौ ना
नेत्रे वामेतरे स्यादसुरकुलगुरुः सूर्यजस्त्वङ्घ्रिरोगी ॥ १९ ॥

संस्कृत—षष्ठेशे लग्नयाते=लग्नस्थे, मनुजः हि=निश्चयेन, वैरिहन्ता=शत्रुहन्ता, भवति। धनस्थे=द्वितीयभावगते, (लग्नेशे), पुत्रात्तार्थोऽतिदुष्टः=पुत्रगृहीतधनः, अति दुष्टश्च स्यात्। सहजभवनगे=तृतीयस्थे, ग्रामदुःखाकरः=ग्रामस्याहितकरः, नाभिस्थाने रोगी=नाभिरोगी, च स्यात्। तनुनिधन पती=लग्नाष्टमेशौ, शत्रुभावस्थितौ=षष्ठस्थौ, ना=पुरुषः, वामनेत्रे, असुरकुलगुरुः=शुक्रः, चेत्तदा इतरे=दक्षिणनेत्रे रोगी स्यात्। सूर्यजः=शनिः, चेत्तदा अङ्घ्रिरोगी=चरणरोगी, स्यादिति ॥ १९ ॥

हिन्दी—जिसके जन्मपत्र में षष्ठेश लग्न में हो वह शत्रुहन्ता होता है। यदि षष्ठेश द्वितीय में हो तो उसका धन पुत्र ले लेता है और अति दुष्ट होता है। तृतीय भाव में षष्ठेश हो तो वह ग्रामीण को कष्ट देने वाला और नाभि रोगी होता है। लग्नेश और अष्टमेश छठे भाव में हो तो वामनेत्र—रोगी, शुक्र से दक्षिण नेत्र रोगी और शनि से चरण रोगी हो ॥१९॥

दन्तादिरोगयोगाः—

दन्ते दन्तच्छदे वा कुमुदपतिरिपुः संस्थितः षष्ठभावे
केतुर्वा लग्ननाथः कुजबुधभवने संस्थितः क्वापि दृष्टः।
स्वेन प्रत्यर्थिना वा भवति जनुषि चेदासनार्धे सरोग-
स्तौ भूमीसूर्यपुत्रौ यदि रिपुगृहगौ तद्भवः स्याद्गदोतुः ॥२०॥

संस्कृत—जनुषि=जन्मकाले, कुमुदपतिरिपुः=राहुः, वा केतुः, षष्ठभावे संस्थितश्चेत्तदा, दन्ते व दन्तच्छदे=ओष्ठे, रोगः स्यात्। वा लग्ननाथः=लग्नेशः, कुजबुधभवने द्वापि कस्मिन्नपि भावे, स्थितः, स्वेन प्रत्यर्थिना=निज शत्रुणा, दृष्टश्चेत्तदा आसनार्धे=गुदसमीपे, सरोगः=रोगयुक्तः, भवति। यदि तौ भूमीसूर्यपुत्रौ=मंगलशनैश्चरौ, रिपुगृहगौ=शत्रुस्थानगतौ, तदा नुः=नरस्य, तद्भवः=रक्तवायुविकारोत्पन्नः, वा गदः=रोगः, स्यादिति ॥२०॥

हिन्दी—जिसके जन्मलग्न से राहु या केतु छठे भाव में हों तो उसके दाँत या ओष्ठ में रोग होता है। लग्नेश यदि मंगल और बुध की राशि (मेष, वृश्चिक, मिथुन,कन्या) में होकर किसी भाव में हो और अपने शत्रुग्रह से देखा जाता हो, तब गुदा के पास रोग होता है। यदि शनि और मंगल लग्न से छठे भाव में हो तो क्रम से वायु और रक्त के विकार से रोग होता है ॥२०॥

अन्यान्यरोगयोगाः—

प्रालेयांशौ रिपुस्थे खलखगसहिते मानवो रोगवान् स्यात्
क्रूरैर्निष्पीडितश्चेत्तनुसदनगतः शीतरश्मिस्तदानीम्।
क्रूरे केन्द्रालयस्थे यदि शुभविहगैर्नेक्षिते रोगवान् स्यात्
तस्मिन् काव्यालयस्थे कुजगुरुकविभिर्नेक्षिते तद्वदेव ॥ २१ ॥

संस्कृत—प्रालेयांशौ=चन्द्रे, खलखगसहिते=पापग्रहयुते, रिपुस्थे=षष्ठस्थे, मानवः रोगवान् स्यात्। चेद् क्रूरैः=पापैः, निपीडितः=विजितः, शीतरश्मिः=चन्द्रः, तनुसदनगतः=लग्नस्थः, तदानीं रोगी स्यात्। यदि क्रूरे=पापग्रहे, केन्द्रालयस्थे=केन्द्रस्थानगते, शुभविहगैः=शुभग्रहैः, नेक्षिते=अदृष्टे, (सति जातकः) रोगवान् स्यात्। तस्मिन् क्रूरे काव्यालयस्थे=शुक्रराशिगते, कुजगुरुकविभिर्नेक्षिते तदा तद्वदेव रोगवानेव स्यादिति ॥२१॥

हिन्दी—पाप ग्रह के साथ चन्द्रमा षष्ठभाव में हो तो मनुष्य रोगी हो। यदि पापग्रह से पराजित चन्द्र लग्न में हो तो रोगी हो। पापग्रह केन्द्र (१।७।४।१०) में हो और उन्हें शुभग्रह न देखें तो जातक रोगी हो। अथवा पापग्रह शुक्र की राशि (वृष, तुला) में हो और उसको मंगल-गुरु और शुक्र नहीं देखते हों तो मनुष्य रोगी होता है॥ २१ ॥

युक्ति—चन्द्र मन का स्वामी है और षष्ठस्थान शत्रु और रोग का है। इसलिये रोगाक्रान्त मन होने से रोगी होना उचित ही है। शरीर, सुख, जाया और कर्म केन्द्र हैं अतः शुभ ग्रह दृष्टि रहित पापग्रह केन्द्र में रहने पर शारीरिक और मानसिक रोग होना स्वाभाविक है। शुक्र वीर्याधिपति होने से उसके घर में पापग्रह द्वारा रोग कथन भी युक्ति संगत है। जिस धातु का स्वामी जो ग्रह है तदनुसार रोग होगा ॥ २१ ॥

पुँल्लग्ने स्वीयतुङ्गे रिपुभवनपतौ वीक्षितेऽसन्नभोगै-
रङ्गे नूनं नराणामरिजनवशतः स्याद्गदो गूढरूपः।
रिःफस्थाने स्थिते चेदरिसदनपतौ सिंहिकापुत्रयुक्ते
किंवा सप्ताश्वयुक्ते परगृहवसतिर्नीचवृत्तिर्नरः स्यात् ॥२२॥

संस्कृत—रिपुभवनपतौ = षष्ठेशे, पुँल्लग्ने = पुरुषराशिगतलग्ने, वा स्वीयतुङ्गे = स्वोच्चे, असन्नभोगैः = अशुभग्रहैः, वीक्षिते = अवलोकिते सति, नूनं नराणां अङ्गे = शरीरे, अरिजनवशतः = रिपुजनकारितः, गूढरूपः = प्रच्छन्नः, गदः = रोगः, स्यात्। अरिसदनपतौ = षष्ठेशे, चेद्, रिःफस्थान स्थिते = द्वादशस्थे, सिंहिकापुत्रयुक्ते = राहुयुक्ते, किंवा सप्ताश्वयुक्ते = सूर्ययुते, सति नरः परगृहवसतिः = अन्यभवननिवासी, नीचवृत्तिश्च स्यादिति ॥२२॥

हिन्दी—जिसके जन्मसमय में षष्ठेश पुरुषराशि (१।३।५।७।९।११) के लग्न में या अपनी उच्चराशि में हो और उसको पापग्रह देखते हों तो उसके शरीर में शत्रुकृत गुप्तरोग होता है। यदि षष्ठेश राहु या रवि से युक्त होकर द्वादश में हो तो वह पुरुष परगृहनिवासी और नीचवृत्तिक होता है ॥ २२ ॥

वि०—पिता माता आदि के विचार में, पितृस्थानादि को लग्न मानकर उससे षष्ठस्थान के स्वामी को षष्ठेश कल्पना कर कथित योगों का विचार करना चाहिये।

सप्तमभावे विवाहयोगः—

यावन्तो वा विहङ्गा मदनसदनगाश्चेन्निजाधीशदृष्टा
स्तावन्तो नुर्विवाहास्त्वथ सुमतिमता ज्ञेयमित्थं कुटुम्बे।
कार्यो होरागमज्ञैरधिकबलवतां खेचराणां हि योगा-
दादेश्यं तत्र वीर्यं रविविधुकुभुवामङ्कदिक् शैलसंख्यम् ॥२३॥

संस्कृत—अथ मदनसदनगाः=लग्नात्सप्तमस्थानगताः, यावन्तः विहङ्गाः=शुभा वा पापग्रहाः. निजाधीशदृष्ट्या=सप्तमेशेनावलोकिताः, चेत्तदा तावन्तः=तत्संख्यकाः, नुः=नरस्य, विवाहाः स्युः। इत्थं सुमतिमता=बुद्धिमानेन, कुटुम्बे = बन्धवादावपि, ज्ञेयम्। होरागमज्ञैः=जातकशास्त्रविज्ञैः, अधिकबलवतां खेचराणां=ग्रहाणां, योगात् हि (विचारः) कार्यः। तत्र रविविधुकुभुवां=सूर्यचन्द्रकुजानां, क्रमेण अङ्कदिक्शैलसंख्यं=षट्दशसप्तसंख्यं, वीर्यं=बलं, आदेश्यं=कथनीयम्। अन्येषां षट् संख्यकं बलमिति पद्धतिवचनाज्ज्ञेयमिति ॥ २३ ॥

हिन्दी—जन्मलग्नसे सप्तमभाव स्त्री का है अतः सप्तमेश से दृष्ट जितने ग्रह सप्तम में हों उतने विवाह होते हैं। इस तरह बुद्धिमान् ज्योतिषी जातक के बान्धवादि कुटुम्बों का विचार करें। जातकशास्त्र के विज्ञजन अधिक बली ग्रह के योग से विवाह योग निश्चित करें। यहाँ रवि का ६, चन्द्र का १०, मंगल का ७ और शेष ग्रहों का ६ बल होता है ॥ २३ ॥

वि०—सप्तमेश की दृष्टि सप्तम भाव पर होने से उस में स्थित सभी ग्रहों को सप्तमेश देखेंगे। इस हेतु बली ग्रह के योग से विवाह की संख्या बतायी गयी है। यदि कोई ग्रह न हो तब ग्रहों की दृष्टि से एवं सप्तमेश के नवमांश या सप्तम भाव के नमांश पर से विचार करना चाहिये।

उदाहरण—किसी का लग्न मेष है और लग्न में शुक्र एवं सप्तम में चन्द्र गुरु, चतुर्थ में मंगल-बुध और पञ्चम में शनि है तो सप्तम भाव पर शुक्र की दृष्टि होने से चन्द्र-गुरु के सम्बन्ध से दो विवाह योग आया। यहाँ मंगल और शनि का भी दृष्टि सप्तम भाव पर है अतः प्रबल योग हुआ! विशेष ग्रह हों तो बली ग्रह के अनुसार फल जानें ॥ २३ ॥

अन्य योगा:—

केन्द्रस्था वा त्रिकोणे यदि खलु गृहिणीकारकाख्या नभोगाः
कामार्थेशौ निजर्क्षे परिणयनविधिः स्यात्तदानीं नुरेकः ।
जायाधीशः कुटुम्बाधिपतिरपि युतश्चेत्त्रिके गर्हिताख्यै
र्यावद्भिः शुक्रयुक्तो नियतमिह भवेत् तावतीनां विरामः ॥२४॥

संस्कृत—यदि गृहिणीकारकाख्याः = स्त्रीकारकाः, नभोगाः—ग्रहाः । केन्द्रस्थाः—प्रथम चतुर्थसप्तमदशमस्थावगताः, वा त्रिकोणे—नवमपञ्चमे, स्थिताः तथा कामार्थेशौ—सप्तमद्वितीयेशौ, निजर्क्षे—स्वराशौ, भवेतां, तदानीं खलु नुः = नरस्य, परिणयनविधिः—विवाहः, एकः स्यात् । जायाधीशः—सप्तमेशः, कुटुम्बाधिपतिरपि—द्वितीयेश अपि, शुक्रयुक्तश्चेद्त्रिके = षष्ठाष्टमद्वादशस्थे यावद्भिः गर्हिताख्यैः = पापग्रहैः युतः दृष्टः वा तावतीनां स्त्रीणां, इह—अस्मिन् योगे, विरामः—नाशः, भवेत् ॥ २४ ॥

हिन्दी—जन्म समय में स्त्रीकारक ग्रह (सप्तमेश, शुक्र, चन्द्र, चर कारक एवं सप्तमस्थ ग्रह) केन्द्र (१।४।७।१०) में या त्रिकोण (९।५) में हों और सप्तमेश एवं द्वितीयेश अपनी राशि में हो तो एक विवाह का योग होता है । यदि सप्तमेश और द्वितीयेश शुक्र के साथ त्रिक (६।८।१२) में हों और वे जितने पापग्रहों से युत या दृष्ट हों उतनी स्त्रियाँ विनाश होती हैं ॥ २४ ॥

वि०—पूर्व की टीका में सप्तमेश और शुभ ग्रह को स्त्री-कारक माना है । शुभ ग्रह के सम्बन्ध में कल्याण वर्मा का वचन पं० हरभानु की संस्कृत टीका में जो है वह एक प्रकार का योग है । उससे कारक का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है इसलिये शुभग्रह स्त्री कारक न होगा । होराशास्त्र में चर कारक, स्थिर कारक, एवं भाव कारक प्रभृति कहे गये हैं । उनके आधार पर चन्द्र, शुक्र, चर कारक, सप्तमेश, और सप्तमभावस्थ ग्रह स्त्री कारक हैं ।

सप्तमभाव के विशेष योग

(१) द्विविवाह योग—लग्नेश लग्न में एवं अष्टमेश १।७ में या लग्नेश धनेश ६ में और ७ में पाप-ग्रह अथवा शुभ युत सप्तमेश शत्रु या नीच राशि में

हो और ७ में पापग्रह हो या स्त्री कारक ग्रह तथा शुक्र पापयुत या दृष्ट होकर अस्त हो या शत्रु-नीच राशि में हो अथवा १।४।७।८।१२ इन में पाप ग्रह हों या दो में विशेष पापग्रह हों और पापयुत धनेश हो, या १।२।७ में पापग्रह और सप्तमेश निर्बल हो तो द्वितीय विवाह योग होता है। इन योगों में शुभग्रह के सम्बन्ध से परिहार जानना चाहिये।

२—विवाह-वर्ष-योग—शुभ राशि में सप्तमेश और शुक्र अपनी उच्च आदि राशि में हो या ७ में रवि शुक्र और सप्तमेश हो, या द्वितीय में शुक्र और ७।११ में सप्तमेश या लग्न में शुक्र और लग्नेश मकर या कुम्भ में हो तो १७ वर्ष के भीतर विवाह होता है। यदि १।४।७।१० में शुक्र हो और शुक्र से सप्तम शनि हो तो १९ वर्ष, चन्द्र से सप्तम शुक्र और शुक्र से सप्तम शनि होने से १८ वर्ष विवाह योग कारक होता है। धनेश ११ में और लग्नेश १० में हो या लग्नेश २ में हो तो बचपन में ही विवाह हो। यदि धनेश मंगल के साथ हो और शुक्र द्वितीय में हो तो २२-२७ के बीच, एवं सप्तमेश ११ में और सप्तम भाव के नवमांश में लग्नेश हो तो २६ वर्ष में, यदि लग्न नवमांश में शुक्र हो और अष्टम भाव की नवमांश राशि सप्तम भाव में हो तो २५ से ३३ के मध्य यदि शुक्र ३ में और सप्तमेश ९ में हो तो २७ से ३० तक, यदि ४ में राहु और ५ में शुक्र हो तो ३१-३३ वर्ष में विवाह योग होता है।

गर्भाभावयोगाः—

लग्नस्थे सप्तसप्तौ दिनमणितनये कामगे चार्कमन्दौ
द्यूनेचन्द्रे नभःस्थे न च यदि गुरुणाऽऽलोकिते नो प्रसूते।
द्वेष्येशे मित्रमन्दौ द्विषि सितकिरणेऽस्ते बुधेनेक्षिते नो
सूते द्वेष्ये जलर्क्षे यदि कुजरविजौ गर्भिणी स्यान्न नारी ॥२५॥

संस्कृत — सप्तसप्ती—सूर्ये, लग्नस्थे, दिनमणितनये—शनैश्चरे, कामगे—सप्तमस्थे, तदा जातकस्य नारी गर्भिणी न स्यात्। अथ अर्कमन्दौ—रविशनैश्चरौ, द्यूने—सप्तमस्थान-गते, यदि गुरुणा नालोकिते—अदृष्टे, चन्द्रे नभःस्थे—दशमस्थे, तदा नारी न प्रसूते। एवं द्वेष्येशे—षष्ठेशे, मित्रमन्दौ—रविशनैश्चरौ,

द्विषि = षष्ठगते, बुधेन ईक्षिते = अवलोकिते, सितकिरणे = चन्द्रे, अस्ते = सप्तमस्थे, सति नारी नो सूते । तथा यदि कुजरविजौ = मंगलशनैश्चरौ, द्वेष्ये = षष्ठे, जलर्क्षे = चतुर्थे, वा स्थितौ भवतस्तदा नारी गर्भिणी न स्यादिति ॥ २५ ॥

हिन्दी—जिसकी कुण्डली में रवि लग्न में और शनि सप्तम में हो तो उसकी स्त्री गर्भ धारण नहीं करती । यदि रवि और शनि सप्तम में हो और गुरु-दृष्टि सहित चन्द्र दशम में हो अथवा षष्ठेश, रवि और शनि यदि षष्ठ स्थान में हो और बुध से दृष्ट चन्द्र सप्तम में हो या शनि और मंगल षष्ठ या चतुर्थ में हो तो स्त्री गर्भ धारण नहीं करती ॥ २५ ॥

युक्ति—रवि ताप कारक, शनि वायु कारक, मङ्गल रक्त विकार कारक चन्द्र रस कारक एवं स्त्री कारक और बुध नपुंसक होने से उक्त योगों में उनके सम्बन्ध द्वारा गर्भाभाव योग उचित है ।

अष्टमभावफलम्—

रन्ध्रस्थानस्थिता वा स्थिरभवनगताः शुक्रवागीशसौम्याः
कृच्छ्राणां कर्मणां ना भवति हि नियतं कारकः स्तब्धभावः ।
बाल्ये दुःखी नरः स्यान्निधनगृहपतौ लाभयाते सुखी स्या-
त्पश्चात् पापेऽल्पमायुः शुभखगसहिते दीर्घमायुर्नराणाम् ॥२६॥

संस्कृत—शुक्रवागीशसौम्याः = शुक्रगुरुबुधाः, रन्ध्र-स्थानस्थिताः = अष्टमस्थाः, वा स्थिरभवनगताः = स्थिरराशिगताः, तदा ना = पुरुषः, नियतं कृच्छ्राणांकर्मणां = क्लिष्टकर्मणां, कारकः = कर्ता, स्तब्धभावः = अकोमलचित्तः च भवति । निधनगृहपतौ = अष्टमेशे, लाभयाते = एकादशस्थे, सति नरः बाल्ये दुःखी पश्चात् सुखी स्यात् । एवं लाभगताष्टमेशे, पापे = पाप ग्रहे, सति अल्पमायुस्तथा शुभखगसहिते = शुभग्रहयुते, नराणां दीर्घायुः स्यादिति ॥२६॥

हिन्दी—शुक्र, गुरु और बुध यदि अष्टम या स्थिर राशि में हों तो मनुष्य कठिन कार्य कर्ता और कठोर हृदयवाला होता है । यदि अष्टमेश एकादशभाव में हो तो मनुष्य बचपन में दुःखी और जीवन के उत्तरभाग में सुखी होता है यदि पापग्रह अष्टमेश होकर ११ में हो तो अल्पायु और शुभ या शुभग्रह के साथ रहने पर मनुष्य दीर्घायु होता है ॥ २६ ॥

अल्पायुप्रभृतियोगाः—

कुर्यादायुर्गृहेशः खलखगयुगरिप्रान्त्यसंस्थोऽल्पमायु-
श्चेल्लग्नाधीशयुक्तो निधनभवनपः स्वल्पमायुः प्रदत्ते।
रन्ध्रस्थो वा चिरायुस्तदनु रविभवस्तत्र तद्वल्लयेशः
कोशस्थानस्थितश्चेज्जनुषि हि मनुजो वैरियुक् तस्करः स्यात्॥२७॥

संस्कृत—आयुर्गृहेशः=अष्टमेशः खलखगयुक्=पापयुक्तः, अरिप्रान्त्यसंस्थः=षष्ठद्वादशस्थानगतः, तदा अल्पायुः कुर्यात्। चेद् निधनभवनपः=अष्टमेशः, लग्नाधीशयुक्तः=लग्नेशयुतः, (षष्ठद्वादशगतः) तदा स्वल्पमायुः=अल्पायुः, प्रदत्ते। वा अष्टमेशः रन्ध्रस्थः=अष्टमस्थः, तदा चिरायुः=दीर्घायुः, प्रदत्ते। तदनु रविभवः=शनिः, तत्राष्टमस्थश्चेत्तदा तद्वत् चिरायुः स्यात्। वा जनुषि=जन्मकाले, लयेशः=अष्टमेशः, चेद् कोशस्थानस्थितः=द्वितीयस्थः, तदा हि=निश्चयेन, मनुजः=नरः, वैरियुक्तः=शत्रुयुतः, तस्करः=चोरः च स्यात्॥ २७॥

हिन्दी—यदि पापयुत अष्टमेश ६।१२ में हो अथवा लग्नेश के साथ अष्टमेश ६।१२ में हो तो मनुष्य अल्पायु होता है। यदि अष्टमेश या शनि अष्टम में हो तो दीर्घायु करता है। जन्मकाल में अष्टमेश यदि द्वितीय भाव में हो तो मनुष्य शत्रुयुत और चोर होता है॥ २७॥

युक्ति—आयु का अधिपति निर्बल होने पर अल्पायुप्रद होना उचित ही है। अष्टमस्थ स्वगृही का अष्टमेश (आयु का अधिपति) होने से एवं शनि (यम) आयुस्थानस्थ होने पर आयुवर्द्धक होने के कारण दीर्घायुप्रद कहा गया है। कोषाधिकारी शत्रुयुत एवं तस्कर प्रायः व्यवहार में भी होता है।

आयुर्देहाधिनाथौ निधनरिपुगतौ हीनवीर्यौ प्रसूतौ
सङ्ग्रामे कीर्तिशेषं व्रजति बलयुतौ तौ सदा तज्जयास्तिम्।
शुक्रेणान्दोलिकायास्तनुपविधुयुतो वाहनस्थाननाथो
मूर्तौ दंतावलेन्द्रैरथ गुरुसहितः स्याज्जयो वाजिवाहैः॥२८॥

संस्कृत—प्रसूतौ = जन्मकाले, आयुर्देहाधिनाथौ = अष्टमेश लग्नेशौ-हीनवीर्यौ = निर्बलौ, निधनरिपुगतौ = अष्टमषष्ठस्थौ, तदा संग्रामे, कीर्तिशेषं व्रजति अर्थात् युद्धं विहाय मृत्युमाप्नोति। तौ = अष्टमेश-लग्नेशौ, बलयुतौ = सबलौ, तदा तज्जयार्थि व्रजति = विजयीभवतीत्यर्थः। अथवाहनस्थाननाथ = सुखेशः शुक्रेण युतस्तदा आन्दोलिकायाः = शिविकायाः, जयः स्यादर्थात् शिविकास्थितो विजयी भवति। एवं सुखेशः = चतुर्थेशः, तनुपविधुयुतो = लग्नेश-चन्द्राभ्यांयुक्तो, मूर्त्तौ = लग्ने, स्थितस्तदा दन्तावलेन्द्रैः = श्रेष्ठगजैः, जयः स्यात् अथ यदि सुखेशः गुरुसहितः लग्ने भवेत्तदा वाजिवाहैः = तुरगैः, जयः स्यादिति ॥२८॥

हिन्दी—जिसके जन्म समय में अष्टमेश और लग्नेश निर्बल होकर ८।६ में हों तो वह पुरुष संग्राम से विमुख होकर मृत्यु प्राप्त करता है। यदि वे दोनों ग्रह बली हों तो विजय होती है। यदि लग्न से चौथे स्थान का स्वामी शुक्र के साथ हो तो शिविका (पालकी) पर बैठकर, लाग्नेश और चन्द्र के साथ लग्न में होने पर गजेन्द्र पर स्थिति होकर और गुरु के साथ लग्न में हो तो घोड़े पर बैंठकर मनुष्य जाय प्राप्त करता है ॥२८॥

नवमभाव-फलम्—

भाग्येशो मूर्तिवर्ती सुरपतिगुरुणालोकितो भूपवन्द्यो
लग्नस्थो वाहनेशो नवमपतिरुभौ पश्यतश्चेत्स्वगेहम्।
सर्वासामास्पदं स्यान्मनुज इह तदा सम्पदां वाहनेन्द्रो
रन्ध्रस्थानस्थितश्चेद् व्रजति हि मनुजो भाग्यराहित्यमेवम् ॥२९॥

संस्कृत—सुरपतिगुरुणालोकितः = गुरुदृष्टः, भाग्येशः = नवमेशः, मूर्तिवर्त्ती = लग्नगतः, तदा भूपवन्द्यः = नृपपूज्यः, स्यात्। वाहनेशः = सुखेशः, नवमपतिश्च, उभौ लग्नस्थौ चेत् स्वगेहं = निजभवनं, पश्यतस्तदा इह = अस्मिन् योगे, मनुजः सर्वासां सम्पदां = सर्वविधैश्वर्याणां, आस्पदं = आश्रयः, स्यात्। चेद् वाहनेन्द्रः = सुखेशः, रन्ध्रस्थानस्थितः = अष्टमस्थः, तदा, हि, मनुजः भाग्य राहित्यं = भाग्यहीनत्वं व्रजति = प्राप्नोति। एवमित्यस्याग्रिमेण सम्बन्धः ॥२९॥

हिन्दी—गुरुदृष्ट नवमेश यदि लग्न में हो तो मनुष्य राजपूजित हो। नवमेश के साथ सुखेश लग्न में होकर यदि अपने भवन को अर्थात् नवमेश नवम को और सुखेश चतुर्थस्थान को देखें तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य सर्वविध सम्पत्तियों का आश्रय होता है। यदि सुखेश अष्टम में हो तो मनुष्य भाग्यहीन होता है ॥२९॥

हीनानां वाहनानां तदनु चपलताप्राप्तिरेवं नराणां
ज्ञेया होरागमज्ञैरथ नवमपतौ लाभगे राजवन्द्यः।
दीर्घायुर्धर्मशीलस्तदनु धनवपुर्वाहनेशः स्वगेहे
धर्मेशो लग्नवर्ती जनुषि यदि गजस्वामिसिंहासनानाम् ॥३०॥

संस्कृत—अष्टमस्थे सुखेशे सति हीनानां वाहनानां—निर्बलवाहनानां प्राप्तिस्तदनु नराणां चपलता = चञ्चलता, स्यात्। एवं होरागमज्ञैः—दैवज्ञैः, ज्ञेया॥ अथ नवमपतौ—नवमेशे, लाभगे = एकादशस्थे, सति नरः राजवन्द्यः—नृपमान्यः, दीर्घायुः, धर्मशीलश्च स्यात्। तदनु—तदनन्तरं, यदि जनुषि—जन्मकाले, धनवपुर्वाहनेशाः—द्वितीयलग्नचतुर्थेशाः, स्वगेहे, धर्मेशः—नवमेशः, लग्नवर्ती—लग्नगतः, स्यात् तदा गज-स्वामिसिंहसनानां = द्विपराजसिंहासनानां प्राप्तिः स्यादिति ॥३०॥

हिन्दी—सुखेश अष्टम में हो तो निर्बल वाहन और चञ्चलता प्राप्त हो इस तरह ज्योतिषियों को जानना चाहिये। यदि नवमेश एकादश में हो तो मनुष्य राजमान्य, दीर्घायु और धर्मात्मा होता है। जन्मकाल में यदि जन्मलग्न से द्वितीय, चतुर्थ एवं लग्न के स्वामी क्रम से अपने घर में याने २।४।१ में हों तो हाथी और राजसिंहासन प्राप्त होते हैं ॥३०॥

युक्ति—भाग्येश बली होने पर उत्तम भाग्य एवं निर्बल में भाग्यहीन होना स्वाभाविक है। धन, वाहन, शरीर और भाग्य के स्थान क्रम से २।४।१।९ हैं। अतः इनके स्वामी ग्रहों के अपने स्थान में होने पर धन, वाहन, शरीर एवं भाग्य अच्छे होंगे।

योगफलकथनपूर्वकराजयोग।—

योगानां स्यादमीषां प्रचुरबलयुतो योऽधिपस्तद्दशायां
लब्धिश्चान्तर्दशायामथ गुरुभृगुजौ वाहनाधीशयुक्तौ।
केन्द्रे याने त्रिकोणे त्वथ गुरुकवियुग्वाहनस्थानगो वा
भाग्याधीशः स्वराशौ भवति नरपतिर्वाहनव्यूहनाथः ॥ ३१ ॥

संस्कृत—अमीषां योगानां प्रचुरबलयुतः—अधिकबली, यः, अधिपः—योगकर्त्ताग्रहः, तद्दशायां अन्तर्दशायां च लब्धिः स्यात्। अर्थात् योगफलस्य लाभो भवति। अथ वाहनाधीशयुक्तौ = चतुर्थेशयुक्तौ, गुरुभृगुजौ केन्द्रे, अयाने एकादशे त्रिकोणे,भवेतां, अथवा भाग्याधीशः गुरुकवियुग्वाहनस्थानगः = गुरुशुक्रयुक्तश्चतुर्थगः, वा स्वराशौ—स्वभवने, भवेत्तदा वाहनव्यूहनाथः नरपति स्यादिति ॥३१॥

हिन्दी—योगकारक ग्रहों में अधिक बली ग्रह की दशा और अन्तर्दशा में योगफल प्राप्त होता है। यदि सुखेश के साथ गुरु और शुक्र केन्द्र (१।४।७।१०), अयान (११) या त्रिकोण (९।५) में हों अथवा गुरु-शुक्र के साथ भाग्येश (नवमेश) ४।९ में हो तो मनुष्य वाहन समूह का स्वामी राजा होता है ॥३१॥

चिन्तायोगः—

कर्मस्थे क्षेत्रचिन्ता त्रिकभवनगते सौख्यचिन्ता महीजे
वागीशे यानभूषावसनहयभवा चामरच्छत्रचिन्ता।
प्रालेयांशौ सिते स्यादथ मदनगते वाक्पतौ पुत्रचिन्ता
सन्तानस्थानयाते हिमकरतनये बुद्धिजाऽथ त्रिकोणे ॥ ३२ ॥

संस्कृत—महीजे = मंगले, कर्मस्थे—दशमस्थे, क्षेत्रचिन्ता, त्रिकभवनगते = षष्ठाष्टमद्वादशस्थे, सौख्यचिन्ता, विषयसुख-चिन्ता स्यात्। वागीशे—गुरौ, त्रिकस्थे यानभूषावसनहयभवा—वाहनालङ्कारवस्त्राश्वजनिता, चिन्ता स्यात्। प्रालेयांशौ—चन्द्रे, वा सिते = शुक्रे, त्रिकस्थे चामरच्छत्रचिन्ता स्यात्। अथ, वाक्पतौ = गुरौ, मदनगते—सप्तमस्थे पुत्रचिन्ता स्यात्। हिमकरतनये =

बुधे सन्तानस्थानयाते=पञ्चमे सति, बुद्धिजा चिन्ता स्यात् । अथ त्रिकोणे—इत्यस्याग्रिमश्लोकेन सम्बन्धः ॥ ३२ ॥

हिन्दी—जन्मलग्न से दशम में मंगल होने से कृषि सम्बन्धि चिन्ता, त्रिक (६।८।१२) में हो तो विषयसुख सम्बन्धि चिन्ता, हो । गुरु त्रिक (६।८।१२) में होने से वाहन, भूषण, वस्त्र और घोड़े की चिन्ता हो । चन्द्र या शुक्र त्रिक (६।८।१२) में हो तो चामर एवं छत्र की चिन्ता, यदि गुरु सप्तम में हो तो पुत्रचिन्ता, और बुध पञ्चम में होने से बुद्धि सम्बन्धिनी चिन्ता होती है ॥ ३२ ॥

मार्त्तण्डे तातबन्ध्वोरथ सुतनवमद्यूनगे दानवेज्ये
यात्राचिन्ता नराणामथ नवमसुते पुत्रजा वासवेज्ये ।
कर्माधीशो विवीर्यो यदि जनुषि तदा सर्वकर्मास्पदं नो
गेहे स्वीये यदाऽसौ शुभविहगयुतो मानवो मानशीलः ॥३३॥

संस्कृत—मार्त्तण्डे=सूर्ये त्रिकोणे तातबन्ध्वोश्चिन्ता स्यात् । अथ दानवेज्ये=शुक्रे, सुतनवमद्यूनगे=पञ्चमनवमसप्तमगे, नराणां यात्राचिन्ता भवति । अथ वासवेज्ये=गुरौ, नवमसुते सति पुत्रजा चिन्ता स्यादिति । यदि जनुषि=जन्मकाले, कर्माधीशः=दशमेशः; विवीर्यः=बलहीनः, स्यात्तदा नरः सर्वकर्मास्पदं=निखिलकर्मस्थानं, न, अर्थात् कार्यसाधने न क्षमो भवति यदा असौ दशमेशः शुभविहगयुतः स्वीयगेहे भवेत्तदा मानवः मानशीलः=मानी, स्यादिति ॥ ३३ ॥

हिन्दी—रवि त्रिकोण (९।५) में होने से पिता और बन्धुओं की चिन्ता होती है । यदि शुक्र ५।९।७ में हो तो यात्रा चिन्ता, और गुरु ९।५ में होने से पुत्रचिन्ता होती है । आगे दशमभावका फल कहते हैं—यदि जन्म काल में दशमेश निर्बल हो तो मनुष्य को कार्य सफलता नहीं होती । यदि वह शुभ ग्रह के साथ अपने भवन याने दशम में हो तो मनुष्य मानी होता है । वली एवं शुभयुत दृष्ट शुभ स्थान में दशमेश होने पर सर्व कार्य साधक समझना चाहिये ॥ ३३ ॥

दीर्घमध्याल्पायुर्योगाः—

लाभे केन्द्रे त्रिकोणे तनुनिधननभस्थानपाः संस्थिताश्चे
द्दीर्घायुः पापखेटाः पणफरहिबुकत्रिस्थिता मध्यमायुः ।
हीनायुः प्रोक्तमेते यदि जनुषि नृणां स्युस्तदाऽऽपोक्लिमस्था
रन्ध्रस्थानस्थितानां तनुपतिगगनस्वामिसूर्यात्मजानाम् ॥३४॥

संस्कृत—यदि जनुषि=जन्मकाले, तनुनिधननभस्थानपाः=लग्नाष्टम-दशमेशाः, लाभे केन्द्रे त्रिकोणे संस्थिताश्चेत्तदा नृणां दीर्घायुः स्यात् । पापखेटाः पणफरहिबुकत्रिस्थिताः = द्विपञ्चाष्टैकादशचतुर्थतृतीयस्थानस्थाः, तदा मध्यमायुः स्यात् । प्रोक्तमेते पूर्वोक्ताः ग्रहाः, आपो क्लीमस्थाः=तृतीयषष्ठ नवम-द्वादशस्थानगताः, तदा हीनायुः=अल्पायुः, स्यात् । रन्ध्रस्थान-स्थितानां = अष्टमस्थानगतानां, तनुपतिगगनस्वामिसूर्यात्मजानां= लग्नेशदशमेशशनैश्चराणां, मध्ये यो हीनबलस्तद्दशायुदः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ ३४ ॥

हिन्दी—जन्मकाल में यदि लग्नेश, अष्टमेश और दशमेश लाभ (११), केन्द्र (१।४।७।१०), और त्रिकोण (९।५) में हों तो मनुष्य दीर्घायु (६४ वर्ष से अधिक आयु का होता है। पापग्रह यदि पणफर (२।५।८।११), हिबुक (४), और त्रि (३) में हों तो मध्यायु (६४) यदि वे ग्रह आपोक्लीम (३।६।९।१२) में हो तो अल्पायु (३८ वर्ष के भीतर) होता है। लग्नेश, दशमेश और शनि अष्टम में हो तो उनमें निर्बल ग्रह की दशातक आयु होती है। इसका सम्बन्ध अग्रिम श्लोक से है ॥ ३४ ॥

यो हीनस्तद्दशायुस्त्वथ निजभवने धर्मकर्मात्मजेशा-
श्चेत्स्युस्तेषां दशायां बहुलबलवशाद्धर्मबुद्धिर्नराणाम् ।
हानिः स्यादन्यथाऽसौ तनुनिधनपती भानुपुत्रेण युक्तौ
स्यातां स्वर्भानुना चेत्तदनु च शिखिना तद्दशायां व्रणाः स्युः ॥३५॥

संस्कृत—अष्टमस्थानां लग्नेशदशमेशशनैश्चराणां मध्ये यः ग्रहः हीनः= निर्बलः, तद्दशायुः स्यात् । अथ धर्मकर्मात्मजेशाः=नवमदशमपञ्चमेशाः,

निजभवने = स्वगृहे, चेद् स्युः तदा तेषां मध्ये बहुलबलवशात् = अधिकबलवशात्, तद् दशायां = बलीग्रहदशायां नराणां धर्मबुद्धिः स्यात्। अन्यथा हानिरिति। यदि तनुनिधनपती = लग्नाष्टमेशौ, भानुपुत्रेण = शनिना, स्वर्भानुना = राहुणा, शिखिना = केतुना च युक्तौ अरौ = षष्ठे स्यातां, तदा तद्दशायां = तयोरधिक-बलीग्रहदशायां, व्रणाः स्युरिति ॥ ३५ ॥

हिन्दी—अष्टमस्थ लग्नेश, दशमेश और शनि के मध्य जो निर्बली हो उसकी दशा पर्यन्त आयु होती है। यदि नवमेश दशमेश और पञ्चमेश अपने भवन में हों उनमें जो बली हो उसकी दशा में मनुष्य की धार्मिक प्रवृत्ति होती है। अन्यथा दूसरे गृह में रहें तो बली ग्रह की दशा में धार्मिकबुद्धि की हानि होती है। अष्टमेश और लग्नेश शनि, राहु या केतु के साथ छठे स्थान में हो तो उनमें बली ग्रह की दशा में व्रण होता है ॥ ३५ ॥

नवमादिभावविचारः—

यानेशस्तत्र संस्थो यदि भवति तदा यानहेतुर्मृतिः स्या-
च्चोराच्छस्त्रेण चिन्ता नवमभवनतो भाग्यजाता विधेया।
व्योम्नो भूपालभूषावसनहयमहत् कर्मणां प्राप्तिचिन्ता
लाभस्थानेऽखिलानां व्ययं निधनगृहात् कल्मषाणां विधेया ॥३६॥

संस्कृत—यदितत्र षष्ठभावे यानेशः = चतुर्थेशः, संस्थः = स्थितः, तथा शनिना, राहुणा, केतुना च युक्तस्तदा क्रमेण यानहेतुः = वाहननिमित्तेन, चोरात् शस्त्रेण च मृतिः = मरणं, स्यात्।

नवमभवनतः भाग्यजाताचिन्ता विधेया, व्योम्नः = दशमभावात् भूपाल-भूषावसनहयमहत्कर्मणां प्राप्तिचिन्ता विधेया। लाभस्थाने अखिलानां पदा-र्थानां तथा व्ययनिधनगृहात् कल्मषाणां = मलिनकर्मणां, चिन्ता विधेया।३६।

हिन्दी—यदि लग्न से षष्ठभाव में चतुर्थेश शनि के साथ हो तो सवारी के हेतु से, राहु के साथ हो तो चोर से और केतु के साथ होने पर शस्त्राघात से मनुष्य को मृत्यु होती है।

वि०—नवमभाव से भाग्यसम्बन्धी विचार, दशम से राज, भूषण, वस्त्र, घोड़े और उत्तम कार्यों के विचार तथा द्वादश और अष्टम भाव से मलिन-कर्म सम्बन्धी विचार करना चाहिये ॥ ३६ ॥

भाग्य वृद्धिकारकयोगः

(१) कर्मेश से युत दृष्ट धनेश लाभ में हो या लाभेश नवम में हों।

(२) दशमेश से युत दृष्ट नवमेश धनभाव में या गुरु शुक्र के साथ या दृष्ट नवमेश केन्द्र त्रिकोण में हो।

(३) नवमेश २ में धनेश ११ में और लाभेश ९ में हो या नवमेश-कर्मेश का योग हो या पंचम में लग्नेश धनेश का योग हो।

(४) लग्नेश नवमेश एवं धनेश लाभेश तथा भाग्येश लाभेश और कर्मेश नवमेश लग्नेश का स्थान सम्बन्ध हो।

भाग्योदयकाल ज्ञान

भाग्येश रवि में २२ वर्ष चन्द्र में २४ मंगल में २८ बुध में ३२ गुरु में २६ शुक्र में २५ शनि में ३६ और राहु में ४२ वर्ष में भाग्योदय होता है।

वकील आदि के योग

शनि गुरु का योग ९।५ या निजभवनादि में हो अथवा बुध गुरु ३।६।१०-११।६।१२ राशियों में हों, अथवा शनि गुरु परस्पर ९।५ में हों या १।३।७।९-११।५ राशियों में होकर लग्न से १।२।३।५।७।८।६।११ स्थानों में हो तो वकील बैरिस्टर प्रभृति के योग होते हैं।

इञ्जीनियर आदि के योग

लग्न या चन्द्र चर राशि में और रवि शुक्र का योग शुभस्थान में हो, या मंगल मिथुन, तुला या कुम्भ में हो और शुक्र लग्न से १।२।३।५।६।११ स्थानों में हों अथवा रवि मंगल शनि का योग हो या शनि शुक्र का योग मंगल से दृष्ट हो तो इञ्जीनियर प्रभृति के योग होते हैं।

चिकित्सक योग

लग्न या दशम में वृश्चिक राशि हो अथवा उसमें चन्द्र मंगल का योग हो अथवा चन्द्र शुक्र का सम्बन्ध कर्म स्थान में हो या कर्म भाव के नवमांश में हो

या कर्मेश से युत या दृष्ट हो या लग्नेश कर्मेश चन्द्र या शुक्र का योग हो या बली चन्द्र ग्रह हो तो चिकित्सक योग होता है ।

लाभभाव का विचार

लग्न से लाभ (११) में शुभ ग्रह हो या शुभ की दृष्टि हो या लाभेश लाभ में हो या लाभेश की दृष्टि हो तो सन्मार्ग द्वारा लाभ अन्यथा असत् मार्ग से लाभ होता है । लाभेश केन्द्र त्रिकोण में या शुभग्रह के षड्वर्ग में या अपना षड्वर्ग में हो तो लाभप्रद और पापाक्रान्त एवं शत्रु क्षेत्रादि में होने से लाभ बाधक होता है। शुभ और अशुभके योग में मध्यम लाभ कहना चाहिये ॥३६॥

व्यय-भाव-फलम्ः—

लग्नस्थे रिष्फनाथे भवति सुवचनो मानवो रूपवान् वा
स्वर्क्षे कार्पण्यबुद्धिर्बहुतरपशुमान् ग्रामयुक्तः सदा स्यात् ।
धर्मे तीर्थावलोकी बहुलवृषमतिः क्रूरयुक्ते च पापी
मिथ्याकोशान्तकृत् स्यान्नियतमिदमिति ज्ञेयमेवं सुधीभिः ॥३७॥

संस्कृत—रिःफनाथे=द्वादशेशे, लग्नस्थे सति मानवः सुवचनः=मधुर-वाक्, रूपवांश्च भवति । द्वादशेशेस्वर्क्षे=निजभवने, सति कार्पण्यबुद्धिः बहुतर-पशुमान्=बहुपशुयुक्तः, ग्रामयुक्तः=ग्रामाधिकारयुक्तः, च स्यात् । तथा व्ययेशे धर्मे=नवमभवने, सति तीर्थावलोकी, बहुलवृषमतिः=अतिधर्म-बुद्धिः, च स्यात् । अथ क्रूरयुक्ते=पापयुते, द्वादशेशे सति मानवः पापी, मिथ्या कोशान्तकृत=मृषा रक्षितधननाशकः, च स्यात् एवं सुधीभिः नियतमिदं फलं ज्ञेयमिति ॥ ३७ ॥

हिन्दी—यदि द्वादशेश लग्न में हो तो मनुष्य सुन्दर वचन बोलने वाला और रूपवान् होता है । यदि अपने घर में हो तो मनुष्य कंजूस, अनेक पशुयुक्त और ग्राम का अधिकारी होता है । व्ययेश यदि नवम भाव में हो तो मनुष्य तीर्थ-यात्रा करने वाला और धार्मिक विचार का होता है। यदि पापयुक्त हो तो मनुष्य पापी और व्यर्थ संचित धन का नाशक होता है । इस तरह बुद्धिमान् व्यक्ति कथित योगफल निश्चितरूप से जाने ॥ ३७ ॥

द्वितीयाध्यायोपसंहारः—

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मञ्जुलेऽस्मिन् ।
भावाध्यायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्युक्तः शैलरामैः प्रणीतः ॥३८॥

संस्कृत—हृद्यैः=मनोहरैः, पद्यैः, गुम्फिते=रचिते, सूरितोषे=विद्वज्जन-तुष्टिप्रदे, मञ्जुले=सुन्दरे, अस्मिन्, अलंकाराख्ये जातके=जातकालङ्कारग्रन्थे, शैलरामैः=सप्तत्रिंशद्भिः, वर्यैर्वृत्तैर्युक्तः=उत्तमश्लोकैर्युतः, श्रीगणेशे=श्रीगणेश-नाम्ना गणकेन, भावाध्यायः, प्रणीतः=निर्मितः ॥ ३८ ॥

हिन्दी—मनोहर छन्दों से रचित विद्वानों को आनन्द देने वाले सुन्दर इस "जातकालङ्कार नामक" ग्रन्थ में ३७ उत्तम श्लोकों से युक्त श्री गणेश दैवज्ञ ने भावाध्याय को वनाया । इस श्लोक में शालिनी छन्द है ॥३८॥

इति जातकालङ्कारे द्वितीयो भावाध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

अथ योगाध्यायः

योगस्य वैशिष्ट्यम्—

ग्रहाधीना योगाः सदसदभिधाना जनिमतां
ततो योगाधीनं फलमिति पुराणैः समुदितम् ।
अतो वक्ष्ये योगान् सकलगणकानन्दजनकान्
शुकास्यादुद्भूतं मतमहमिहालोक्य रुचिरम् ॥ १ ॥

संस्कृत—जनिमतां प्राणिनां सदसदभिधाना योगाः शुभाशुभयोगाः ग्रहाधीनाः भवन्ति । ततो योगाधीनं फलमिति पुराणैर्वसिष्ठपराशरप्रभृतिभिः समुदितं कथितम् । अतो इह शुकास्याद् शुकाचार्यमुखाद् उद्भूतं निर्गतं रुचिरं मतं विलोक्य सकलगणकानन्दजनकान् निखिलदैवज्ञानां प्रीत्युत्पादकान् योगान् वक्ष्ये । अत्र शिखरिणीवृत्तम् । अस्य लक्षणं यथा—रसैरुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः "शिखरिणी" ॥१॥

हिन्दी—प्राणियों का शुभाशुभ योग ग्रहों के अधीन हैं और फल योग के अधीन हैं ऐसा प्राचीन वसिष्ठादि महर्षि आचार्यों ने कहा है । इस हेतु श्रीशुकदेव जी के मुख से विनिर्गत सुन्दर मतों को विचार कर सभी ज्योतिषियों के आनन्दप्रद योगों को कहता हूँ ॥ १ ॥

क्रोधादिदुष्टयोगाः—

ऋक्षेशः क्षीणवीर्यः सुतनवमगतो मानवो मन्युमान् वै
राशीशे सङ्गनाथे रिपुनिधनगृहे प्रान्त्यगे दुर्बलः स्यात् ।
धर्मद्वेष्याष्टनाथाः खलखचरयुताः स्थानके क्वापि संस्थाः
तैर्दृष्टाः स्यात्तदानीं परपुरुषरता सुन्दरी तस्य पुंसः ॥ २ ॥

संस्कृत—क्षीणवीर्यः निर्बलः ऋक्षेशः राशीशः सुतनवमगतस्त्रिकोणभावस्थस्तदा वै निश्चयेन मानवः मन्युमान् स्यात् क्रोधी भवतीत्यर्थः । सरङ्गनाथे लग्नेशयुते राशीशे रिपुनिधनगृहे प्रान्त्यगे = त्रिकस्थे, सति नरः दुर्बलः स्यात् । एवं खल-

खचरयुताः पापयुक्ताः धर्मद्वेष्याष्टनाथाः नवमषष्ठाष्टमेशाः क्वापि स्थानके संस्थाः यत्र कुत्रापि स्थितास्तैः पापग्रहैर्दृष्टा अवलोकितास्तदानीं तस्य पुंसः पुरुषस्य सुन्दरी भार्या परपुरुषरता स्यादिति ॥ २ ॥

हिन्दी—जिसके जन्मराशि का स्वामी ग्रह निर्बल होकर जन्मलग्न से त्रिकोण (९।५) में हो वह मनुष्य क्रोधी होता है। यदि लग्नेश के साथ जन्मराशि का स्वामी त्रिक (६।८।१२) में बैठे हो तो वह दुर्बल होता है। पापग्रह के साथ लग्न से नवम, षष्ठ और अष्टम स्थानों के स्वामी किसी स्थान में हो और पापग्रहों से देखा जाय तो उस मनुष्य की स्त्री व्यभिचारिणी होती है ॥ २ ॥

जारजादियोगाः—

मातृस्थाने स्थितौ चेत् कुजविधुसहितौ षष्ठरन्ध्राधिनाथौ
स्यातां यस्य प्रसूतौ भवति खलु नरस्त्वन्यजातस्तदानीम् ।
क्वापि स्थाने स्थितौ स्तः कलुषखगयुतौ भाग्यषष्ठाधिनाथौ
चेदेवं राहुणा वा तदनु च शिखिना संयुतावन्यजातः ॥ ३ ॥

संस्कृत—यस्य नरस्य प्रसूतौ जन्मकाले कुजविधुसहितौ भौमचन्द्रयुतौ षष्ठरन्ध्राधिनाथौ षष्ठाष्टमेशौ चेत् मातृस्थाने चतुर्थभावे स्थितौ स्यातां तदानीं नरः खलु निश्चयेन अन्यजातः परजातो भवति। एवं कलुषखगयुतौ पापग्रहयुक्तौ भाग्यषष्ठाधिनाथौ नवमषष्ठेशौ क्वापि स्थाने स्थितौ स्तः यत्र कुत्रापि भवतः वा एवं चेद् राहुणा तदनु च शिखिना केतुना संयुतौ तदाप्यन्यजातः स्यादिति ॥३॥

हिन्दी—जिस मनुष्य के जन्म समय में मंगल और चन्द्र से युत षष्ठेश और अष्टमेश लग्न से चतुर्थ भाव में हो तो वह परजात (पिता से भिन्न पुरुष से उत्पन्न) होता है। इसी तरह पापग्रहों के साथ अथवा केवल राहु या केतु के साथ नवम स्थान का स्वामी और छठे स्थान का स्वामी किसी स्थान में बैठे हों तो भी मनुष्य परजात होता है ॥ ३ ॥

युक्तौ मन्देन शूद्रादथ भवति विदा वैश्यतो भास्करेण
चत्राज्जातः सितेन त्रिदशपगुरुणा भूमिदेवात् प्रसूतः ।
दैत्येशेज्यौ सपापौ मदनरिपु धनस्थानगौ चेत् परस्त्री-
गामी व्योमारिपौ स्तो गगनभवनगौ तत्पितान्यारतः स्यात् ॥४॥

संस्कृत—अथ नवमषष्ठेशौ मन्देन शनिना युक्तौ चेत्तदा शूद्राज्जातो भवति। एवं विदा बुधेन युक्तौ तौ चेत्तदा वैश्यतः, भास्करेण युक्तौ तदा क्षत्रात् क्षत्रियात्, सितेन शुक्रेण त्रिदशपगुरुणा बृहस्पतिना च भूमिदेवाद्विप्रात्प्रसूतः समुत्पन्नः जातको भवति। स पापौ पापग्रहसहितौ दैत्येशेज्यौ शुक्रबृहस्पती मदनरिपुधनस्थानगौ सप्तषष्ठ–द्वितीयस्थान–स्थितौ चेत्तदा नरः। परस्त्रीगामी स्यात्। यदि व्योमारिपौ दशमषष्ठेशौ गगनभवनगौ दशमस्थानगतौ स्तस्तदा तस्य जातकस्य पिता अन्यारतः परस्त्रीगामी स्यादिति ॥ ४ ॥

हिन्दी—जिसके जन्म समय लग्न से नवम और छठे स्थान के स्वामी शनि से युत हो तो शूद्र से, बुध से युत हो तो वैश्य से, रवि के साथ रहने पर क्षत्रिय से और शुक्र या गुरु के साथ होने पर ब्राह्मण से उत्पन्न जातक को जानना चाहिए। पापग्रह के साथ गुरु और शुक्र सप्तम, षष्ठ और द्वितीय भाव में हों तो वह परस्त्रीगामी होता है। यदि दशमेश और षष्ठेश लग्न से दशम स्थान में हों तो जातक का पिता व्यभिचारी होता है ॥ ४ ॥

मूर्तीशः पापयुक्तो धनसदनगतश्चेत्तदा सज्जनस्त्री-
संयुक्तस्तत्पिता स्यात् खलविहगयुताः कामशत्रुस्वनाथाः ।
कोशस्थास्तद्वदेवं फलमिति विविधं भ्रातृपत्न्योश्च पित्रोः
स्थानेशाः क्वापि भावे तनुपतिसहिताश्चेत् पुमानन्यजातः ॥५॥

संस्कृत—पापयुक्तः मूर्तीशः लग्नेशः धनसदनगतः द्वितीयस्थश्चेत्तदा तत्पिता सज्जनस्त्रीसंयुक्तः स्यात्। कामशत्रुस्वनाथाः सप्तमषष्ठद्वितीयेशाः खलविहगयुताः पापयुक्ताः कोशस्थाः द्वितीयगतास्तदा तद्वदेवं विविधं फलमर्थात्परस्त्रियामास-

क्तिस्तथा आचारविहीनत्वादिकं दुष्टं फलं स्यात्। एवं भ्रातृपत्न्योः पित्रोश्च स्थानेशाः तृतीयसप्तमचतुर्थदशमस्थाननाथाः तनुपतिसहिताः लग्नेशयुक्ताः सन्तः क्वापि भावे यत्र कुत्रापि संस्थिताश्चेत्तदा पुमान् पुरुषः अन्यजातः परजातः स्यादिति ॥ ५ ॥

हिन्दी—पापग्रह से युक्त लग्नेश यदि लग्न से दूसरे स्थान में हो तो जातक का पिता सज्जन स्त्रीगामी होता है। एवं लग्न से सप्तम, षष्ठ और द्वितीय स्थानों के स्वामी यदि पापग्रहों के साथ द्वितीय स्थान में बैठे हों तो उसी तरह के फल अर्थात् परस्त्री गमन कर्ता, दुराचारी, दुष्ट और व्यसनी होता है। यदि लग्न से तृतीय, सप्तम, चतुर्थ और दशम स्थानों के स्वामी लग्नेश के साथ किसी स्थान में रहें तो वह पुरुष जारजात होता है ॥ ५ ॥

कुष्ठादि-रोगयोगाः—

लग्नाधीशेन्दुपुत्रौ क्षितितनयनिशानायकौ क्वापि संस्थौ
युक्तौ स्वर्भानुना वा भवति हि मनुजः केतुना श्वेतकुष्ठी।
आदित्यो भौमयुक्तस्तदनु शनियुतो रक्तकृष्णाख्यकुष्ठी
सार्को लग्नाधिनाथो व्ययरिपुनिधनस्थानगस्तापगण्डः ॥६॥

संस्कृत—लग्नाधीशेन्दुपुत्रौ लग्नेशबुधौ, वा क्षितितनयनिशानायकौ कुज-चन्द्रौ स्वर्भानुना राहुणा वा केतुना युक्तौ क्वापि संस्थौ कुत्रापि स्थितौ भवतस्तदा हि निश्चयेन मनुजः नरः श्वेतकुष्ठी भवति। यदि भौमयुक्तः आदित्यः सूर्यस्तदा रक्तकुठी स्यात्। तदनु शनियुतः सूर्यश्चेत्तदा कृष्णाख्यः कृष्णवर्णनामकः कुष्ठी कुष्ठवान् भवति। अथ लग्नाधिनाथः लग्नेशः सार्कः सूर्यसहितः व्ययरिपुनिधन-स्थानगः द्वादशषष्ठांशद्वितीयस्थस्तदा तापगण्डः रोगः स्यादिति ॥ ६ ॥

हिन्दी—जिसके जन्मकाल में लग्न का स्वामी और बुध अथवा मंगल और चन्द्रमा राहु या केतु से युत होकर किसी स्थान में हों तो वह मनुष्य श्वेत कुष्ठ रोग वाला—यदि मंगल के साथ सूर्य हो तो रक्त कुष्ठ वाला और शनि के साथ होने से कृष्ण कुष्ठ रोग वाला होता है। सूर्य के साथ लग्नेश यदि द्वादश, षष्ठ और अष्टम स्थानों में से किसी स्थान में हो तो मनुष्य तापगण्ड नामक रोगविशेष से पीड़ित रहता है ॥ ६ ॥

गण्डादिविविधरोगयोगाः—

ज्ञेयश्चन्द्रेण गण्डो जलज इह युतो ग्रन्थिशस्त्रव्रणः स्याद्
भूमीपुत्रेण पित्तं हिमकरतनयेनाथ जीवेन रोगः ।
आमोद्भूतस्ततश्चेद् भृगुतनययुतो नुः क्षयाख्यो गदः स्या
च्चोरोद्भूतोऽन्त्यजाद्वा यमशिखितमसामेकयुक् तन्वधीशः ॥७॥

संस्कृत—त्रिकस्थः लग्नस्वामी चन्द्रेण युतस्तदा जलजो गण्डः ज्ञेयः । इह त्रिकस्थः लग्नेशः भूमिपुत्रेण युतस्तदा ग्रन्थिशस्त्रव्रणः स्यात् । त्रिकस्थः लग्नेशः हिमकरतनयेन बुधेन युतस्तदा पित्तं पित्तरोगः स्यात् । अथ जीवेन युक्तस्तदा आमोद्भूतः आमविकारजो रोगः स्यात् । ततश्चेद् त्रिकस्थः लग्नेशः भृगुतनययुतः शुक्रयुक्तस्तदा नुः नरस्य क्षयाख्यो गदः क्षयरोगः स्यात् । यम–शिखि–तमसामेकयुक्शनिराहुकेतूनां मध्ये केनाप्येकेन युक्तः तन्वधीशः लग्नस्वामी त्रिकस्थश्चेत्तदा चौरोद्भूतः वा अन्त्यजाद् अन्त्यजजातेरुत्पन्नो रोगः स्यादिति ॥ ७ ॥

हिन्दी—(इसका सम्बन्ध पूर्व श्लोक से है अतः) जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा के साथ लग्नेश त्रिक (६।८।१२) में हो तो उसको जल से उत्पन्न गण्डरोग होता है । यदि मंगल से युक्त लग्नेश त्रिक (६।८।१२) में हो तो ग्रन्थिरोग शस्त्र जनित घाव से होता है । इसी प्रकार त्रिकस्थान स्थित लग्नेश बुध के साथ होने पर पित्तरोग, गुरु के साथ रहने से आँव रोग, शुक्र से युत हो तो क्षय रोग और शनि, राहु वा केतु के साथ होने से चोर से अथवा अन्त्यज जाति से उत्पन्न रोग होता है ।

चन्द्रो मेषे वृषे वा कुजशनिसहितः श्वेतकुष्ठी सरोगो
दैत्येज्यारेन्दुमन्दास्तिमिभवनगताः कर्कटालिस्थिता वा ।
अङ्गे सौख्येन हीनः परमकलुषकृद्रक्तकुष्ठी नरः स्याद्
वागीशो भार्गवो वा यदि रिपुगृहपो मूर्तिगः क्रूरखेटैः ॥८॥

संस्कृत—अथ कुजशनिसहितश्चन्द्रः—मेषे वा वृषे यदि भवेत्तदा सरोगः श्वेतकुष्ठी स्यात् । यदि दैत्येज्यारेन्दुमन्दाः शुक्रभौमचन्द्रशनैश्चराः तिमिभवन-

गताः मीनराशिस्थाः वा कर्कटालिस्थितास्तदा नरः अङ्गे सौख्येन हीनः सुखहीनाङ्गः परमकलुषकृत् महापापी रक्तकुष्ठी च स्यात्। यदि वागीशः भार्गवः वा रिपुगृहपः षष्ठेशः क्रूरखेटैर्दृष्टः मूर्तिगः लग्नस्थः स्यात्तदा वक्त्रशोफी स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ ८ ॥

हिन्दी—मंगल और शनि से युत चन्द्रमा मेष राशि या वृष में हो तो रोग युक्त श्वेतकुष्ठी होता है। यदि शुक्र, मंगल, चन्द्र और शनि, मीन, कर्क या वृश्चिक राशि में बैठे हों तो मनुष्य शरीर-सुखहीन, महापापी और रक्तकुष्ठी होता है। गुरु, शुक्र या लग्न से छठे स्थान का स्वामी पापग्रह से देखे जाते हों और लग्न में हो तो मनुष्य के मुख में शोफ रोग होता है ॥ ८ ॥

दृष्टश्चेद्वक्त्रशोफी त्वथ खलसहिता मीनकर्कालिभावा
लूताकारश्चिरं स्यात् परमगदकरः कुष्ठ एवं नराणाम्।
रिःफस्थानस्थितश्चेद् विबुधपतिगुरुर्गुप्तरोगी नितान्तं
भूमीमार्तण्डपुत्रौ व्ययभवनगतौ शत्रुगो वा व्रणी स्यात् ॥९॥

संस्कृत—'दृष्टश्चेद्वक्त्रशोफी' इत्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः। अथ मीनकर्कालिभावाः खलसहितास्तदा एवं नराणां चिरं लूताकारः परमगदकरः कुष्ठः स्यात्। यदि विबुधपतिगुरुः रिःफस्थानस्थितश्चेत्तदा नितान्तं गुप्तरोगी स्यात्। भूमीमार्तण्डपुत्रौ व्ययभवनगतौ वा शत्रुगौ षष्ठस्थौ तदा व्रणी स्यात् ॥ ९ ॥

हिन्दी—जिसकी जन्मकुण्डली में मीन, कर्क और वृश्चिक राशि में पापग्रह हो उस मनुष्य को लूताकार अर्थात् मकड़ी के जाल सदृश अत्यन्त कठिन कुष्ठ होता है। यदि गुरु लग्न से बारहवें स्थान में हो तो गुप्तरोगी हो। मंगल और शनि यदि लग्न से द्वादश में रहे या छठे में हो तो मनुष्य व्रणी होता है ॥ ९ ॥

खञ्जादिरोगयोगाः—

मेषे मीने कुलीरे तदनु च मकरे वृश्चिके मन्दचन्द्रौ
स्यातां क्रूरान्वितौ चेन्नवमभवनगौ मानवः स्याच्च खञ्जः।
लग्नस्थं पश्यतीन्दुं दिनमणितनयं भूमिजो द्यूनदृष्ट्या
बुद्ध्या हीनो नरः स्यादिनविधुविवरे भूमिजश्चेत्तथैव ॥१०॥

संस्कृत—नवमभवनगौ क्रूरान्वितौ मन्दचन्द्रौ मेषे मीने कुलीरे तदनु मकरे वृश्चिके च स्यातां चेत्तदा मानवः खञ्जः स्यात्। भूमिजः मंगलः द्यून-दृष्ट्या सप्तमदृष्ट्या लग्नस्थमिन्दुं चन्द्रं दिनमणितनयं शनिं च पश्यति तदा बुद्धया हीनः बुद्धिहीनः स्यात्। चेद् भूमिजः इनविधुविवरे सूर्यचन्द्रयोर्मध्ये स्याद्यदा तथैव बुद्धिहीनः स्यादिति ॥ १० ॥

हिन्दी—लग्न से नवम स्थान में पापग्रह युक्त शनि और चन्द्र यदि मेष, मीन, कर्कट, मकर और वृश्चिक राशियों में से किसी राशि में हो तो मनुष्य खञ्ज (लँगड़ा) होता है। मंगल यदि सप्तम दृष्टि से लग्न स्थित चन्द्रमा और शनि को देखता हो तो बुद्धिहीन योग होता है। यदि मंगल सूर्य और चन्द्रमा के बीच में हो तो मनुष्य बुद्धिहीन होता है ॥ १० ॥

प्रालेयांशौ तनुस्थे गगनसदनगे साधिकारेऽर्कसूनौ
दृष्टेऽस्मिन् कामदृष्ट्या हिमकिरणभुवा बुद्धियुङ् मानवः स्यात्।
पृथ्वीसूनुं मृगाङ्कं तनुनिलयगतं पूर्णदृष्ट्येन्दुसूनुः
पश्येच्चेद् बुद्धिहीनस्त्वथ शशितनुपौ भूभुवा पीडितौ वा ॥ ११ ॥

संस्कृत—प्रालेयांशौ चन्द्रे तनुस्थे लग्नस्थे, साधिकारे स्वषड्वर्गाधिपत्ययुक्ते अर्कसूनौ शनैश्चरे गगनसदनगे दशमस्थे हिमकिरणभुवा बुधेन कामदृष्ट्या पूर्ण-दृष्ट्या दृष्टेऽवलोकिते सति अस्मिन् योगे जातः मानवः बुद्धियुक् स्यात्। तनु-निलयगतं लग्नस्थं पृथ्वीसूनुं मंगलं मृगाङ्कं चन्द्रं च इन्दुसूनुश्चन्द्रः पूर्णदृष्ट्या चेत्पश्येत्तदा बुद्धिहीनः स्यात्। अथवा शशितनुपौ चन्द्रलग्नेशौ भूभुवा कुजेन पीडितौ तदा बुद्धिहीनः स्यादिति ॥ ११ ॥

हिन्दी—चन्द्रमा लग्न में हो और अपने अधिकार (षड्वर्ग) से युक्त दशमस्थ शनि को पूर्ण दृष्टि से बुध देखता हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य बुद्धिमान होता है। लग्न में बैठे हुए मंगल और चन्द्र को पूर्ण दृष्टि से बुध देखे अथवा चन्द्र और लग्नेश को मंगल पीड़ित अर्थात् पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो मनुष्य बुद्धिहीन होता है ॥ ११ ॥

विशेष—किसी ने 'तनुनिलय' का अर्थ लग्न और अष्टम किया है किन्तु संज्ञाध्याय में निलय अष्टम की संज्ञा नहीं की गयी है अतः तनुनिलय का अर्थ लग्न ही करना उचित जान पड़ता है।

वुद्धिहीनादियोगाः—

लग्नस्थे रौहिणेये तदनु रविशनी क्रूरदृष्टौ रिपुस्था-
वेकर्क्षे चैकभागे भवति गतिमतिर्दृष्टिहीनौ शुभानाम्।
तिग्मांशौ वैरिनाथे खलविहगयुते तुर्यगे सूर्यसूनौ
हृद्रोगी वाक्पतौ वा भवति हृदि नरः कृष्णपित्ती सकम्पः ॥१२॥

संस्कृत—रोहिणेये वुधे लग्नस्थे तदनु क्रूरदृष्टौ शुभानां दृष्टिहीनौ रविशनी एकर्क्षे एकभागे च रिपुस्थौ तदा नरः गतमतिः स्यात्। यदि वैरिनाथे षष्ठेशे तिग्मांशौ सूर्ये खलविहगयुते तुर्यगे चतुर्थस्थे हृद्रोगी स्यात्। एवं सूर्यसूनौ वा वाक्पतौ षष्ठेशे पापयुते चतुर्थे सति हृदि कृष्णपित्ती भवति वा दुष्टैः पीडितस्तदा हृदि सकम्पः स्यादित्यग्रिमेण सम्वन्धः॥ १२ ॥

हिन्दी—वुध लग्न में हो और पापदृष्टि से युत और शुभ दृष्टि से रहित रवि और शनि एक राशि की एक ही अंश में होकर लग्न से छठे में हो तो मनुष्य वुद्धिहीन होता है। पापयुत षष्ठेश रवि होकर चतुर्थ में होने से मनुष्य हृदयरोगी हो। इसी तरह शनि अथवा गुरु यदि पापयुत षष्ठेश होकर चौथे में होनेसे कृष्ण पित्त रोग से युत हो। अथवा शनि या गुरु पापग्रहों से पीड़ित हो तो कम्प रोग होता है॥ १२ ॥

विशेष—इस श्लोक के "रिपुस्थावेकर्क्षे चैकभागे" इसका अर्थ विचारणीय है। रवि और शनि षष्ठ भाव में होने से ही एक राशि के हो जायगें अतः एकर्क्षे पद व्यर्थ है। एक राशि का होने से एक भाग का अर्थ जो पूर्व टीका में "चक्रस्य पूर्वार्द्धे परार्द्धे वा" किया गया है वह स्वतः हो जाता है अतः 'एक भागे' पद भी व्यर्थ है। इसकी सिद्धि में यदि तीनों का अलग अलग योग होना उचित है अर्थात् पाप रवि और शनि षष्ठ में या कहीं एक राशि में या एक नवमांश में हो और शुभ दृष्टि न हो वुध लग्न में हो तव मनुष्य वुद्धिहीन

होता है। उत्तरार्द्ध की टीका में पण्डित हरभानु ने लिखा है कि 'शनौ गुरौ वा षष्ठे' यह संगत नहीं जान पड़ता, कारण षष्ठस्थान का नाम श्लोक में नहीं है, इस हेतु प्रसंगवश शनि वा गुरु षष्ठेश होकर पापग्रह के साथ चतुर्थ में हो तो कृष्णपित्त का रोग होता है। यह अर्थ उचित है ॥ १२ ॥

हृदयादिरोगयोगाः—

दुष्टैर्वा पीडितः सन्नथ कुजरविजौ वाक्पतिर्बन्धुसंस्थो
हृद्रोगः स्यान्नराणां त्विह नियतं क्लेशकारी शरीरे।
पातालस्थो महीजस्तनयनिलयगाः सूर्यवित् सैंहिकेया
रन्ध्रस्थो भानुपुत्रो यदि जनुषि तदा स्यान्नरो दुःखभागी ॥ १३ ॥

संस्कृत—(अत्र दुष्टैर्वा पीडितः सन् इत्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः।) अथ कुजरविजौ वाक्पतिर्बन्धुसंस्थौ तदा इह नराणां शरीरे नियतं क्लेशकारी हृद्रोगः स्यात्। यदि जनुषि महीजः पातालस्थश्चतुर्थस्थः सूर्यवित्सैंहिकेयाः तनयनिलयगस्तथा भानुपुत्रः शनिः रन्ध्रस्थस्तदा दुःखभागी नरः स्यात् ॥ १३ ॥

हिन्दी—यदि मंगल शनि और गुरु लग्न से चतुर्थ स्थान में हों तो मनुष्य के शरीर में निश्चित कष्टप्रद हृद्रोग होता है। यदि मंगल चौथे में, सूर्य बुध एवं राहु पञ्चम में और शनि अष्टम में हों तो दुःख भोगने वाला मनुष्य होता है ॥ १३ ॥

मनुष्यस्वभावादिबोधकयोगाः—

लग्नं पश्येन्निजर्क्षे यदि धरणिसुतः संस्थितः कातरः स्या-
च्छायासूनुर्नभःस्थो यदि निशि जननं तद्वदत्रापि वाच्यम्।
मूर्तौ भूमीतनूजे स्वजनकलहकृद् द्यूनगे स्वाधिकारा-
द्धीने भौमे वपुष्मान् परमयुधि रतस्तीक्ष्णभावश्च नूनम् ॥ १४ ॥

संस्कृत—यदि धरणिसुतः निजर्क्षे संस्थितः सन् लग्नं पश्येत्तदा जातकः कातरः स्यात्। छायासूनुः यदि नभस्थः निशि जननं च स्यात्तदा अत्रापि तद्वत्

भीरुत्वमिति वाच्यम् । भूमी तनुजे मूर्त्तौ सति स्वजनकलहकृत्, स्वाधिकाराद्धीने भौमे द्यूनगे तदा नूनं वपुष्मान् परमयुधिरतः तीक्ष्णभानुश्च स्यादिति ॥ १४ ॥

हिन्दी—मंगल अपनी राशि मेष या वृश्चिक में रहकर यदि लग्न को देखे तो मनुष्य डरपोक होता है। शनि दशम में रहे और रात्रि का जन्म हो तो भी मनुष्य कातर होता है। लग्न में मंगल हो तो अपने सगे-सम्बन्धियों से झगड़ा करने वाला हो। यदि षड्वर्ग के अधिकार से हीन मंगल सप्तम में हो तो सुन्दर युद्धरत और तेज स्वभाव वाला हो ॥ १४ ॥

पश्येतां कामदृष्ट्या धरणिविधुसुतौ चेन्मिथः स्यात्तदानी-
मुच्चाकारोऽथ चन्द्रं शनिरविमहिजाश्चेत् प्रपश्यन्ति शीतः ।
क्षीणे प्रालेयभानौ धरणिजसहिते पापभूमी खर स्या-
न्मूर्तिस्थो द्यूनदृष्ट्या हिमकरतनयो वासवेज्यं प्रपश्येत् ॥१५॥

संस्कृत—धरणिविधुसुतौ मंगलबुधौ चेन्मिथः परस्परं कामदृष्ट्या सप्तम-दृष्ट्या पश्येतां तदानीं जातकः उच्चाकारः दीर्घशरीरवान् स्यात् । अथ शनिरवि-महिजाः चेत् चन्द्रं प्रपश्यन्ति, तदा शीतः शीतलस्वभावः स्यात् । धरणिज-सहिते कुजयुक्ते प्रालेयभानौ क्षीणे क्षीणचन्द्रे सति पापभूमिः पापी खरः तीक्ष्ण-स्वभावश्च स्यात् । एवं मूर्तिस्थः लग्नस्थः हिमकरतनयो बुधः द्यूनदृष्ट्या वासवेज्यं गुरुं प्रपश्येत् तदा नरः हास्यासक्तः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥१५॥

हिन्दी—यदि परस्पर मंगल और बुध एक दूसरे को सप्तम दृष्टि से देखते हों तो जातक दीर्घ शरीरी होता है। शनि, रवि और मंगल से दृष्ट चन्द्र हो तो मनुष्य शीतल स्वभाव (मन्द बुद्धि) का होता है। यदि क्षीणचन्द्र मंगल के साथ किसी स्थान में हो तो जातक पाप करनेवाला और तीखे स्वभाव वाला होता है। लग्नस्थ बुध यदि पूर्ण दृष्टि से गुरु को देखता हो तो मनुष्य हास्यप्रिय होता है ॥ १५ ॥

कोविदादियोगाः—

हास्यासक्तः सभौमे हिमकरतनये स्याच्छुभर्क्षे कुजर्क्षे
मन्दर्क्षे वाऽर्कदृष्टौ नरपतिविदुषां रञ्जने कोविदः स्यात् ।

पश्येत् काव्यं सितांशुर्व्ययविलयरिपुस्थानगो विस्मयालुः
क्षिप्रं वाक्स्फूर्तिमान् स्यात् कुजबुधशशिनो वीर्यवत् खेटदृष्टाः॥१६॥

संस्कृत—(हास्यासक्तः इत्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः।) सभौमे हिमकरतनये शुभर्क्षे शुभग्रहराशौ वा कुजज्ञौ मन्दर्क्षे शनिराशिगतौ अर्कदृष्टौ तदा नरपतिविदुषां नृपाणां पण्डितानां च रञ्जने कोविदः प्रवीणः स्यात्। व्ययविलयरिपुस्थानगः सितांशुः काव्यं पश्येत्तदा विस्मयालुः विस्मययुक्तः स्यात्। कुजबुधशशिनः वीर्यवत्खेटदृष्टाः चेत्तदा क्षिप्रंवाक्स्फूर्तिमान् स्यात् ॥ १६ ॥

हिन्दी—जन्मकाल में मंगल के साथ बुध शुभग्रह की राशि में हो अथवा शनि की राशि (मकर, कुम्भ) में हो और सूर्य से दृष्ट हो तो मनुष्य राजा और विद्वान् को प्रसन्न करने में प्रवीण होता है। चन्द्रमा यदि १२।८।६ में होकर शुक्र को देखे तो विस्मालु. (बातों में आश्चर्य करनेवाला) हो। यदि बली ग्रहों की दृष्टि मंगल, बुध और चन्द्र पर हो तो मनुष्य प्रत्युत्पन्नमति वाला अर्थात् शीघ्र में उत्तर देनेवाला होता है ॥ १६ ॥

व्यभिचारियोगाः—

शुक्रज्ञौ द्यूनयातौ गगनविलयगौ मानवः पुंश्चलः स्यात्
कामाज्ञामन्दिरस्थौ कविधरणिसुतौ तद्वदाज्ञाम्बुयातौ।
काव्यारौ तद्वदिन्दोर्नभसि रविसुतादास्फुजिन्नीरयायी
तद्वत् कामास्पदस्था बुधसितशनयः स्वर्क्षगे भार्गवे हि॥१७॥

संस्कृत—शुक्रज्ञौ द्यूनयातौ गगनविलयगौ (सप्ताष्टदशमस्थौ) तदा मानवः पुंश्चलः स्यात्। कविधरणिसुतौ कामाज्ञामन्दिरस्थौ (सप्तमदशमगतौ) तद्वत्। काव्यारौ आज्ञाम्बुयातौ (दशमचतुर्थगतौ) तदा तद्वत्। इन्दोः नभसि (दशमे) रविसुतात् नीरयायी (चतुर्थे) आस्फुजित् (शुक्रः) तद्वत्। एवं बुधसितशनयः कामास्पदस्थाः (सप्तमदशमगताः) भार्गवे स्वर्क्षगे तदा हि (निश्चयेन) नरः व्यभिचारी स्यादिति ॥ १० ॥

हिन्दी—लाभ से सप्तम, अष्टम वा दशम स्थानों में शुक्र और बुध हों तो मनुष्य व्यभिचारी होता है। एवं शुक्र और मंगल सप्तम या दशम में अथवा वे दोनों दशम या चतुर्थ में हो तो व्यभिचारी हो। यदि चन्द्रमा से दशम और शनि से चतुर्थ शुक्र हो अथवा सप्तम और दशम स्थान में बुध, शुक्र और शनि हो तथा शुक्र अपनी राशि (वृष, तुला) में हो तो मनुष्य व्यभिचारी होता है ॥१७॥

अकीर्तिकरयोगाः—

प्रालेयांशोः सिताद्वा दिनमणितनयस्तत्पुरोभागवर्ती
मूर्तौ चेच्चन्द्रशुक्रौ यदि तरणिसुतं पश्यतश्चायशाः स्यात्।
शेफच्छेदो नराणामथ तपनसुते भूमिकेन्द्रेऽर्कयुक्ते
दृष्टे काव्योडुपाभ्यां यदि दिवसपतेश्चोपरागोऽत्र तद्वत् ॥१८॥

संस्कृत—यदि प्रालयांशात् चन्द्रात् वा सितात् दिनमणितनयः शनिः तत्पुरोभागवर्ती तदग्रिमराशौ भवेदथवा तरणिसुतं शनिं पश्यतः चन्द्रशुक्रौ चेन्मूर्तौ भवतस्तदा नरः अयशाः स्यात्। अथ अर्कयुक्ते तपनसुते शनौ भूमिकेन्द्रे लग्नस्थे, काव्योडुपाभ्यां दृष्टे शुक्रचन्द्रदृष्टे सति यद्यत्र दिवसपतेः सूर्यस्य उपरागः ग्रहणं च स्यात्तदा नराणां शेफच्छेदः लिंगच्छेदः तद्वदयशाः च स्यादित्यार्थः ॥१८॥

हिन्द—यदि चन्द्रमा या शुक्र से शनि अग्रिम राशि में हो अथवा शनि को देखते हुए चन्द्र और शुक्र लग्न में हों तो मनुष्य अपकीर्तिवाला होता है। रवि के साथ शनि लग्न में हो और उसको शुक्र और चन्द्रमा देखते हों और यदि जन्मकाल में सूर्यग्रहण हो तो मनुष्य को लिंग के रोग और अयश प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

रतिसुखविमुखयोगाः—

याते वक्रग्रहत्वं जनुषि भृगुसुते मानवस्तोषदायी
सीमान्तिन्या रतः स्यान्न खलु मदनगं भार्गवं लग्ननाथः।
पश्येत् स्त्रीयालयस्थो यदि रहसि तदा कामिनीतोषदाता
न स्यादेवं हिमांशुर्दिनकरसुतयुग् भौमतः-खे सुखे वा ॥१९॥

संस्कृत—जनुषि जन्मकाले भृगुसुते वक्रग्रहर्क्षे याते सति मानवः सीमन्तिन्यारतेस्तोषदायी न स्यात्। स्वीयालयस्थः लग्ननाथः मदनगं सप्तमस्थं भार्गवे यदि पश्येत्तदा खलु रहसि कामिनीतोषदाता न स्यात्। एवं दिनकर सुतयुक् हिमांशुः भौमतः खे दशमे वा सुखे चतुर्थे भवेत्तदाऽपि कामिनी तोषदात्री न स्यात्॥ १९॥

हिन्दी—जन्मकाल में यदि शुक्र वक्रीग्रह की राशि में हो तो मनुष्य स्त्री की रति में सुखदाता न होता। लग्नेश अपने घर में रहकर यदि लग्न से सप्तम स्थान स्थित शुक्र को देखता हो तो पुरुष एकान्त में स्त्री-सुखदाता न होता। इसी तरह शनि के साथ चन्द्रमा यदि मंगल से दशम अथवा चतुर्थ में हो तो वही फल होता है॥ १९॥

कामुक-योगाः—

क्षोणीपुत्रेण युक्तः प्रथमसुरगुरुर्लग्नतः षष्ठपोऽयं
कामाधिक्यं नराणां जनयति नियतं पापदृष्टो विशेषात्।
काव्ये स्वीयालयस्थे तदनु मिथुनगे कामवान् मानवः स्यान्-
मूर्तौ सप्ताश्वसूनौ धनुषि च वृषभे चेत् पुमानल्पकामः॥२०॥

संस्कृत—प्रथमसुरगुरुः भार्गवः क्षोणीपुत्रेण युक्तः कुजयुक्तोऽपि षष्ठपः स्याद्यदा नराणां कामाधिक्यं जनयति। पापदृष्टश्चेत्तदा नियतं विशेषात्कामाधिक्यं जनयति। स्वीयालयस्थे निजभवनस्थे तदनु मिथुनगे काव्ये सति मानवः कामवान्स्यात्। सप्ताश्वसूनौ = शनैश्चरे धनुषि च वृषभे मूर्तौ चेत्तदा पुमान् अल्पकामः स्यात्॥ २०॥

हिन्दी—जिसके जन्मसमय में मंगल के साथ शुक्र यदि लग्न से छठे स्थान का स्वामी हो तो मनुष्य अधिक कामी होता है। उसको अगर पापग्रह देखता हो तो विशेष कामी होता है। यदि शुक्र अपनी राशि (वृष, तुला) और मिथुन में रहे तो भी मनुष्य कामी होता है। धनु या वृष राशि का शनि यदि लग्न में हो तो मनुष्य अल्प कामी होता है॥ २०॥

मितभाष्यादियोगाः—

मन्दे नक्रेऽल्पभाषी त्वथ रिपुगृहपे वा सुधांशावदृश्ये ।
चेदर्धे संस्थितेऽङ्को भवति जनिमतां नेत्रयोः क्रूरयुक्ते ।
पश्येत् क्षीणं न चन्द्रं यदि भृगुतनयः सूर्यजः पश्यतीन्दुं
स्वर्क्षे चन्द्रे नभःस्थैर्यदि मदनगतैर्वीक्ष्यते पापखेटैः ॥२१॥

संस्कृत—अथ मन्दे शनैश्चरे नक्रे मकरस्थे सति अल्पभाषी भवति । चेद् रिपुगृहपे वा सुधांशौ अदृश्येऽर्धे अर्थात् सप्तमगृहस्य भोग्यांशाल्लग्नस्य भुक्तांश-पर्यन्ते संस्थिते क्रूरयुक्ते सति जनिमतां नेत्रयोः अङ्को भवति । यदि भृगुतनयः क्षीणं चन्द्रं न पश्येत् सूर्यजः इन्द्रं पश्यति चन्द्रे स्वर्क्षे यदि नभस्थैः मदनगतैः वा पापखेटैः वीक्ष्यते नूनं अल्पनेत्रः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ २१ ॥

हिन्दी—जिसके जन्म समय मकरराशि में शनि हो वह अल्पभाषी होता है । यदि षष्ठेश अथवा चन्द्रमा अदृश्यचक्रार्ध (सप्तम के भोग्यांश से अष्टमादि-क्रम से लग्न के भुक्तांश तक अदृश्यचक्रार्द्ध है) में पापग्रह के साथ हो तो मनुष्य के नेत्रों में चिह्न होता है । यदि शुक्र क्षीणचन्द्र को न देखे और शनि चन्द्र को देखे अथवा चन्द्रमा अपनी राशि कर्क में होकर लग्न से दशम या सप्तम स्थानस्थित पापग्रहों से देखा जाय तो मनुष्य छोटे नेत्रों वाला होता है ॥ २१ ॥

काणादि-योगाः—

स्यान्नूनं चाल्पनेत्रस्तदनु तनुगतं भूमिजं वा क्षपेशं
पश्येद् वाचस्पतिश्चेदसुरकुलगुरुः काणदृङ् मानवः स्यात् ।
विच्छाया तिग्मभानोः क्षितिभुवि च पुरोभागगे दृङ् नराणां
सौम्ये चिह्नं दृशि स्यादथ वपुषि लये भार्गवे क्रूरदृष्टे ॥२२॥

संस्कृत—(चाल्पनेत्रपर्यन्तस्य पूर्वेण सम्बन्धः ।) तदनु तनुगतं लग्नगतं भूमिजं वा क्षपेशं चन्द्रं वाचस्पतिः असुरकुलगुरुश्च चेत् पश्येत्तदा मानवः काण-दृक् स्यात् । तिग्मभानो सूर्यात् क्षितिभुवः कुजः पुरोभागगे कालांशान्तरेऽग्रे चेत्तदा नराणां दृक् विच्छाया स्यात् । एवं सूर्यात् सौम्ये बुधेऽग्रस्थे दृशि चिह्नं स्यात् । अथ क्रूरदृष्टे भार्गवे वपुषि लये लग्ने वा अष्टमे तदा अश्रुपातात् नेत्रे पीडा स्यादि-त्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ २२ ॥

हिन्दी—लग्नस्थित मङ्गल को अथवा चन्द्रमा को गुरु और शुक्र देखें तो मनुष्य काना होता है। सूर्य से आगे कालांशा के भीतर अर्थात् अस्तासन्न (मंगल) हो तो कान्तिहीन दृष्टि हो। उसी तरह सूर्य से आगे बुध हो तो आखों में चिह्न होता है। यदि पापदृष्ट शुक्र लग्न या अष्टम में हो तो जातक की आखें अश्रुपात से पीड़ित होती हैं॥ २२॥

नेत्रपीडादि-योगाः—

नेत्रे पीडाऽश्रुपातात्तदनु शशिकुजावेकभावे यदाऽक्ष्णो-
श्चिह्नं किंचित्तदानीं ग्रहबलवशतो दृश्यमेवं सुधीभिः।
मार्तण्डे रिःफयाते तदनु नवमगे पुत्रगे वा खलाढ्ये
दृष्टे वा स्यान्मनस्वी सुविकलनयनः सूर्यजे व्याधियुक्तः॥२३॥

संस्कृत—(नेत्रे पीडाश्रुपातादित्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः।) तदनु शशिकुजौ एकभावे स्थितौ चेत्तदा किञ्चिद् अक्ष्णोश्चिह्नं स्यात्। एवं सुधीभिः ग्रहबलवशतो दृश्यमादेश्यम्। खलाढ्ये पापयुक्ते वा दृष्टे मार्त्तण्डे रिःफयाते तदनु नवमगे वा पुत्रगे (पञ्चमे) सति मनुष्यः मनस्वी सुविकलनयनश्च स्यात्। एवं सूर्यजे (शनौ) सति व्याधियुक्तः स्यादिति॥ २३॥

हिन्दी—जन्मकाल में चन्द्र के साथ मंगल हो तो नेत्र में कोई चिह्न हो। इस तरह विद्वान् ग्रहबलाधीन फलादेश करें। यदि पापग्रह से युत या दृष्ट सूर्य द्वादश, नवम या पञ्चम में हो तो मनुष्य मनस्वी और नेत्रविकल होता है। यदि पापयुत या दृष्ट शनि १२।९।५ में हो तो जातक रोगी होता है॥ २३॥

वामनादिदुष्टयोगाः—

चन्द्रं पृष्ठोदयस्थं हिबुकगृहगतः सूर्यसूनुः प्रपश्ये-
दित्थं लग्नाधिनाथे क्रियभवनगते मानवो वामनः स्यात्।
कोशे पीयूषभानुर्जलचरगृहगः सौरिणा संयुतो वा
मार्तण्डे भूमिकेन्द्रे यदि भवति तदा दद्रुमान् पूरुषः स्यात्।२४।

संस्कृत—हिबुक (चतुर्थं) गृहगतः सूर्यसूनुः (शनिः) पृष्ठोदयस्थं चन्द्रं प्रपश्येत् इत्थं क्रिय-(मेष) भवनगते लग्नाधिनाथे (लग्नेशे) सति मानवः

वामनः स्यात् । जलचरगृहगः पीयूषभानुः (चन्द्रः) कोशे (द्वितीये) सौरिणा (शनिना) संयुतः वा मार्त्तण्डे भूमिकेन्द्रे (लग्ने) यदि भवति तदा पुरुषः दद्रु-मान् स्यात् ॥ २४ ॥

हिन्दी—चतुर्थ स्थानस्थित शनि पृष्ठोदय (वृष, मेष, धनु, कर्क, मकर) राशिस्थित चन्द्र को देखे और लग्नेश मेष राशि में होवे तो मनुष्य वामन होता है। यदि लग्न से द्वितीय जलचर (कर्क, कुम्भ, मीन, मकर) राशि में चन्द्र शनि के साथ हो अथवा लग्न में सूर्य हो तो मनुष्य दाद रोगी होता है। (अन्य टीका में तीन योग लिखा है जो संगत नहीं जान पड़ता) ॥ २४ ॥

प्लीहादिरोगयोगाः—

दृष्टे क्रूरैर्न सौम्यैर्यदि रिपुगृहपे चोडुपे प्लीहवान् स्या-
देवं कामाङ्गनाथे तदनु रविसुतस्तुर्यगो नष्टदृष्टिः ।
प्लीही स्याल्लग्ननाथे दिनकरतनये क्रूरनिष्पीडिते चेत्
सौख्यायुङ्मानवः स्यात्तनुसदनगते प्लीहवान् हर्षहीनः॥२५॥

संस्कृत—रिपुगृहपे उडुपे (चन्द्रे) क्रूरैर्दृष्टे सौम्यैर्नच दृष्टे सति जातकः प्लीहवान् स्यात् । एवं चन्द्रे कामाङ्गनाथे सति क्रूरैः दृष्टे प्लीहवान् स्यात् । तदनु तुर्यगः (चतुर्थस्थः) शनिः क्रूरैर्दृष्टस्तदा नष्टदृष्टिः प्लीही च स्यात् । दिनकर-तनये लग्ननाथे चेद् क्रूरनिष्पीडिते तदा मानवः सौख्यायुक् स्यात् । यदि तनुस-दनगते तदा प्लीहवान् हर्षहीनश्च स्यात् ॥ २५ ॥

हिन्दी—यदि षष्ठेश चन्द्र शुभदृष्टिरहित पापदृष्ट हो तो जातक प्लीहा रोगी होता है। इसी तरह पापदृष्ट चन्द्र, लग्नेश वा सप्तमेश होने पर प्लीहा रोग होता है। पापदृष्ट शनि यदि चतुर्थ में हो तो मनुष्य दृष्टिहीन और प्लीही होता है। यदि पापदृष्ट शनि लग्न में हो तो मनुष्य आनन्दरहित प्लीहा (ताप तिल्ली) रोगी होता है ॥ २५ ॥

अङ्गहीनादियोगाः—

क्रूराः केन्द्रालयस्था वपुषि च विकलाः केन्द्रगौ पुष्पवन्तौ
किंवा लग्ने प्रपश्येत् कविमिनतनयः श्रोणिभागेऽङ्गहीनः ।
काव्यः पातालयायी सुरपतिगुरुणा क्वापि युक्तोऽर्कसूनु-
र्भौमो वा रौहिणेयो भवति हि विकलः श्रोणिभागे भुजेङ्घ्रौ॥२६॥

संस्कृत—क्रूराः केन्द्रालयस्थाः किं वा पुष्पवन्तौ (सूर्यचन्द्रौ) केन्द्रगौ तदा वपुषि (शरीरे) विकलः स्यात् । अथ च इनतनयः (शनिः) लग्ने कविं (शुक्रं) पश्येत्तदा श्रोणिभागे (कटितटे) अङ्गहीनः स्यात् । काव्यः पातालयायी (चतुर्थस्थः) सुरपतिगुरुणा युक्तः अर्कसूनुः (शनिः) भौमो वा रोहिणेयः (बुधः) क्वापि स्थितः, तदा श्रोणिभागे भुजे अङ्घ्रौ वा विकलः स्यात् ।। २६ ।।

हिन्दी—जिसके जन्मकाल में पापग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) में हो अथवा सूर्य और चन्द्र केन्द्र में हों तो मनुष्य विकलाङ्ग होता है। यदि शनि लग्नस्थित शुक्र को देखे तो कमर में विकलता होती है। शुक्र लग्न से चतुर्थ हो और गुरु के साथ शनि, मंगल या बुध किसी स्थान में हो तो मनुष्य के कमर, भुजा और पैर में विकलता होती है ।। २६ ।।

अङ्गविकार-योगाः—

आयुःपुण्याधिनाथौ यदि खलखचरात् तुर्यगौ पापयुक्तौ
जङ्घावैकल्यवान् स्यात् कुजशनिसहिते सैंहिकेये च सूर्ये ।
द्वेष्यस्थे तद्वदेवं शनिरिपुगृहपौ रिःफयातौ खलैश्चेद्
दृष्टौ तद्वत्तदानीं रविविधुरविजा वैरिरन्ध्रालयस्थाः ।।२७।

संस्कृत—यदि आयुःपुण्याधिनाथौ (अष्टमनवमेशौ) खलखचरात् तुर्यगौ (चतुर्थस्थौ) पापयुक्तौ तदा जङ्घा वैकल्यवान् स्यात् । कुजशनिसहिते सैंहिकेये (राहौ) सूर्ये च द्वेष्यस्थे (षष्ठस्थे) तदा तद्वत् । एवं शनिरिपुगृहपौ (शनिषष्ठेशौ) रिःफयातौ (द्वादशस्थौ) खलैः दृष्टौ चेत्तदा तद्वत् (अनूरुः) स्यात् । रविविधुरविजाः वैरिरन्ध्रालयस्थाः (षष्ठाष्टमगताः) तदानीं मनुष्यस्य पञ्चशाखे (हस्ते) आर्तिः (पीडा) स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ।। २७ ।।

हिन्दी—यदि लग्न से अष्टम और नवम स्थान के स्वामी पापग्रह से चतुर्थ स्थान में पापयुत हो अथवा मंगल और शनि के साथ राहु या सूर्य लग्न से छठे स्थान में हो अथवा पापदृष्ट शनि और षष्ठेश द्वादश में हो तो उक्त तीनों योगों में उत्पन्न मनुष्य पंगु होता है। इसी प्रकार रवि, चन्द्र और शनि यदि लग्न से ६।८ में हो तो मनुष्य के हाथों में पीड़ा होती है ।। २७ ।।

क्लीवादियोगाः—

स्यादार्तिः पञ्चशाखे तदनु दशमगे सूर्यसूनौ सिताढ्ये
क्लीवः स्यात् सूर्यसूनौ व्ययरिपुगृहगे शुक्रतः क्लीवरूपः ।
पश्येत् सूर्यालयस्थो मदनभवनगं भूमिसूनुं सुधांशु-
श्चार्कः काणश्च कर्के यदि शुभगृहपो मेषसिंहालिनक्रे ॥२८॥

संस्कृत—'स्यादार्त्तिः पञ्चशाखे' इत्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः । तदनु सिताढ्ये (शुक्रयुक्ते) सूर्यसूनौ दशमगे तदा क्लीवः स्यात् । एवं शुक्रतः सूर्यसूनौ व्ययरिपुगृहगे क्लीवरूपः स्यात् । सूर्यालयस्थः (सिंहराशिगतः) सुधांशुः मदनभवनगं (सप्तमगतं) भूमिसूनुं (कुजं) पश्येत् वा अर्कः कर्के तथाविधं मंगलं पश्येत्, यदि शुभगृहपः (नवमेशः) मेषसिंहालिनक्रे च भवेत्तदा मनुष्यः काणः स्यात् ॥ २८ ॥

हिन्दी—यदि जन्म समय में शुक्र के साथ शनि दशम में हो या शुक्र से १२।६ में शनि हो तो प्रथम योग में नपुंसक और द्वितीय योग में नपुंसक समान आकृतिवाला होता है । यदि सिंहराशिगत चन्द्र लग्न से सप्तम स्थान में स्थित मंगल को देखे अथवा कर्कराशिस्थ सूर्य सप्तमस्थ मंगल को देखे और इन दोनों योगों में यदि लग्न से नवमस्थान का स्वामी मेष, सिंह, वृश्चिक और मकर राशि में हो तब मनुष्य काना होता है ॥ २८ ॥

अन्यान्यषड्विधक्लीव-रोगयोगाः—

अन्योऽन्यं पश्यतश्चेत्तरणिहिमकरौ तत्तनूजौ मिथो वा
भूसूनुः पश्यतीनं समभवनगतं त्वङ्गचन्द्रौ यदौजे ।
ओजर्क्षे युग्मराशौ हिमकरशशिजौ भूसुतेनेक्षितौ चेत्
पुंराशौ लग्नशुक्रौ तदनु हिमकरः क्लीवयोगाः षडेते ॥२९॥

संस्कृत—ओजर्क्षे युग्मराशौ तरणिहिमकरौ (सूर्यचन्द्रौ) चेत् अन्योन्यं (परस्परं) पश्यतस्तदैकः, वा तत्तनूजौ (शनिबुधौ) ओजसमराशिगतौ मिथः पश्यतस्तदा द्वितीयः, समभवनगतं इनं (सूर्यं) विषमराशिगतः भूसूनुः (कुजः) पश्यति वा तद् विपरीतं तदा तृतीयः, अङ्गचन्द्रौ यदा ओजे (विषमे) समरा-

शिगतेन भौमेन ईक्षितौ तदा चतुर्थः, हिमकरशशिजौ (चन्द्रबुधौ) ओजर्क्षे (विषमराशौ) युग्मराशौ (समराशौ) भूसुतेन ईक्षितौ तदा पञ्चमः, लग्न-शुक्रौ चेत् पुंराशौ तदनु हिमकरश्च पुंराशौ भवेत्तदा षष्ठः । एते षट् क्लीवयोगाः भवन्ति ॥ २९ ॥

हिन्दी—यदि विषमराशि में रवि और समराशि में चन्द्र हो और दोनों परस्पर एक दूसरे को देखता हो तो प्रथम, वा शनिबुध की स्थिति इस प्रकार हो तो द्वितीय, विषमराशिगत मंगल यदि समराशिगत सूर्य को देखता हो या इसके विपरीत हो तो तृतीय, विषमराशिगत लग्न और चन्द्र को समराशिस्थ मंगल देखे तो चतुर्थ, चन्द्र और बुध क्रम से एक विषम दूसरा समराशि में हों और दोनों को मंगल देखता हो तो पञ्चम, और यदि लग्न, शुक्र और चन्द्र पुरुषराशि में हों तो षष्ठ क्लीव योग होता है । (सारावली के आधार पर विषमराशि के नवांश में लग्न, शुक्र और चन्द्र होने पर क्लीव योग कहा गया है) ॥ २९ ॥

वि०—परस्पर दृष्टि विचार केवल सप्तम दृष्टि से होगा । अन्य दृष्टि से योग नहीं घटेंगें । लग्न शरीर है, शुक्र-वीर्य, मंगल रक्त, चन्द्र प्रकृति, सूर्य पुरुष और शनि, बुध नपुंसक हैं अतः इनकी स्थिति से नपुंसक योग बनना उचित ही है । इस श्लोक में "पुंराशौ लग्नशुक्रौ" इसका अर्थ पं० हरभानुकृत संस्कृत टीका में "पुरुषग्रहराशिनवांशे स्थिताविति" अर्थात् पुरुषग्रह राशिनवांश किया है जो उचित नहीं । पुरुषग्रहराशि और पुरुषराशि दोनों भिन्न हैं । श्लोक में विषम समराशि की चर्चा है । विषम पुरुष और सम स्त्री राशि है । सारावली के— "ओजनवांशकसंस्था लग्नेन्द्रसितास्तथैवोक्ताः" यह वचन पुरुष राशिनवांश का पोषक है ॥ २९ ॥

अण्डकोषवृद्धियोगाः—

आयुःस्थानोपयाते धरणिसुतयुते भार्गवे वातकोपात्
काव्ये भौमेन युक्ते कुजभवनगते भूमिजा मुष्कवृद्धिः ।
भौमर्क्षे काव्यचन्द्रौ सुरपतिगुरुणा सूर्यजेनाथ दृष्टौ
नूनं स्यान्मानवानां जनुषि कललजा मुष्कवृद्धिर्नितान्तम् ॥३०॥

संस्कृत—धरणिसुतयुते (कुजयुक्ते) भार्गवे आयुस्थानोपयाते (अष्टमे) सति वातकोपान्मुष्कवृद्धिः स्यात् । भौमेन युक्ते काव्ये कुजभवनगते भूमिजामुष्क-वृद्धिः स्यात् । अथ जनुषि काव्यचन्द्रौ भौमर्क्षे स्थितौ तथा सुरपतिगुरुणा सूर्यजेन दृष्टौ तदा मानवानां नितान्तं कललजा (शुक्ररक्तोत्पन्ना) मुष्कवृद्धिः नूनं यात् ॥ ३० ॥

हिन्दी—मंगल के साथ शुक्र अष्टम में होने से वायुविकारजनित अण्ड-कोश की वृद्धि होती है। यदि कुजयुतशुक्र मंगल की राशि (मेष, वृश्चिक) में हो तो भूमिसंसर्ग या पार्थिवतत्त्व के विकार से और मेष वृश्चिक में गुरु शनिदृष्ट शुक्र एवं चन्द्र होने से निश्चय शुक्र-शोणितविकारजन्य अण्डकोश की वृद्धि होती है ॥ ३० ॥

दन्तरोगादि-योगाः—

क्रूरैर्दृष्टे विलग्ने सुविकृतरदनश्चापगो मेषसंज्ञे
खल्वाटः पापलग्ने धनुषि गवि तथाऽऽलोकिते क्रूरखेटैः ।
धर्मार्थान्त्यात्मजस्था यदि खलखचरा बन्धभाक् पूरुषः स्या-
देवं लग्ने क्रिये वा धनुषि गवि तथा रश्मिजं बन्धनं नुः ।३१।

संस्कृत—चापगो मेषसंज्ञे विलग्ने क्रूरैर्दृष्टे सति नरः सुविकृतरदनः (दन्तरोगी) स्यात् । धनुषि गवि पापलग्ने तथा क्रूरखेटैः आलोकिते खल्वाटः स्यात् । यदि खलखचराः धर्मार्थान्त्यात्मजस्थाः (नवमद्वितीयद्वादशपञ्चमस्थाः) तदा पुरुषः बन्धभाक् स्यात् । एवं क्रिये (मेषे), धनुषि वा गवि (वृषे) लग्ने तथा (पापाक्रान्ते) सति नुः (नरस्य) रश्मिजं बन्धनं स्यात् ॥ ३१ ॥

हिन्दी—पापदृष्ट धनु, वृष या मेष लग्न होने से मनुष्य दन्तरोगी और पापयुत दृष्ट धनु या वृष लग्न हो तो खल्वाट (बालहीन शिरवाला) होता है। यदि पापग्रह लग्न से ९।२।१२।५ में हो तो मनुष्य बन्धनभागी होता है। इसी तरह पापग्रहयुत मेष, धनु या वृष लग्न होने से रज्जु (रस्सी) कृत बन्धन होता है ॥ ३१ ॥

शरीरे मुखे च दुर्गन्धि-योगाः—

दुर्गन्धिर्दानवेज्ये शनिभवनगते मानवो विग्रहे स्याद्
द्व्यधीशे बुधर्क्षे तदनु मकरगे तद्वदत्राथ काव्ये ।

केन्द्रस्थे तेन युक् स्यादथ कविरविजौ स्वीयहद्दायुतौ चेत्
तद्वच्चन्द्रेऽजयाते तनुसदनगते चानने स्याद्विगन्धिः ॥३२॥

संस्कृत—शनिभवनगते दानवेज्ये सति मानवो विग्रहे दुर्गन्धिः स्यात्। द्वेषाधीशे बुधर्क्षे तदनु मकरगे तद्वदत्र स्यात्। अथ बुधर्क्षे काव्ये केन्द्रस्थे तेन (बुधेन) युक् तदा तद्वत्फलं स्यात्। अथ चेत्कविरविजौ स्वीयहद्दायुतौ (स्वत्रिंशांशगौ) तदा तद्वत्। तनुसदनगते चन्द्रे अजयाते (मेषस्थे) सति मानवस्यानने विगन्धिः (दुर्गन्धिः) स्यात्॥ ३२॥

हिन्दी—यदि शनि की राशि (मकर, कुम्भ) में शुक्र हो, या लग्न से छठे स्थान का स्वामी बुध की राशि (मिथुन, कन्या) और मकर में हो, अथवा बुध की राशि में शुक्र हो और वह केन्द्र (१।४।७।१०) स्थान में हो तथा बुध से युत हो, वा शुक्र और शनि अपने अपने हद्दा (त्रिशांश) में हो, अथवा यदि मेषलग्न में चन्द्रमा हो तो उक्त चार योगों में मनुष्य के शरीर में और अन्तिम पांचवे योग में मनुष्य के मुख में दुर्गन्धि होती है॥ ३२॥

फलादेशकथन-प्रकारः—

एवं ग्रहाणां सदसत्फलानां योगाद् ग्रहज्ञैरनुयोजनीयम्।
शुभाशुभं जन्मनि मानवानां फलं सुमत्या प्रविचार्य नूनम्।३३।

संस्कृत—एवं मानवानां जन्मनि सदसत्फलानां ग्रहाणां योगाद् शुभाशुभं फलं ग्रहज्ञैः नूनं सुमत्या प्रविचार्य अनुयोजनीयमिति॥ ३३॥

हिन्दी—इस तरह मनुष्यों के जन्म समय में सद्-असद् फल को देने वाले ग्रहों के योग से शुभ या अशुभ फल को अपनी सुन्दर बुद्धि से विचार कर ज्योतिषी को कहना चाहिए॥ ३३॥

योगाध्यायोपसंहारः—

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मञ्जुलेऽस्मिन्।
योगाध्यायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्युक्तो रामरामैः प्रणीतः॥३४॥

संस्कृत—श्रीगणेशेन सूरितोषे हृद्यैः पद्यैः गुम्फिते अस्मिन् मंजुले अलंकाराख्ये जातके वर्यैः रामरामैर्वृत्तैर्युक्तः योगाध्यायः प्रणीतः॥ ३४॥

हिन्दी—श्रीगणेश ज्योतिषी ने पण्डितों को आनन्द देनेवाला मनोहर श्लोकों से रचित इस जातकालंकार ग्रन्थ में ३३ श्लोकों से युत योगाध्याय को बनाया॥३४॥ इति जातकालंकारे योगाध्यायः समाप्तः॥

अथ विषकन्याध्याय:

विषकन्यायोगाः—

भौजङ्गे कृत्तिकायां शतभिषजि तथा सूर्यमन्दारवारे
भद्रासंज्ञे तिथौ या किल जननमियात् सा कुमारी विषाख्या।
लग्नस्थौ सौम्यखेटावशुभगगनगश्चैक आस्ते ततो द्वौ
वैरिक्षेत्रानुयातौ यदि जनुषि तदा सा कुमारी विषाख्या।

संस्कृत—भौजङ्गे (श्लेषायां) कृत्तिकायां शतभिषजि (नक्षत्रेषु) तथा सूर्यमन्दारवारे भद्रा (२।७।१२) संज्ञे तिथौ या कुमारी जननमियात् सा किल (विषकन्या) भवति। यदि जनुषि सौम्यखेटौ लग्नस्थौ एकोऽशुभः गगनगः (दशमस्थः) ततः द्वौ पापौ वैरिक्षेत्रानुयातौ (शत्रुगृहस्थौ) तदा सा कुमारी विषाख्या भवतीत्यर्थः ॥ १ ॥

हिन्दी—जन्मकाल में श्लेषा, कृत्तिका, शतभिषा नक्षत्रों में क्रम से रवि, शनि, मंगलवार और भद्रा (२।७।१२) तिथि होने से तीन तरह के विषकन्या योग होते हैं । जैसे श्लेषानक्षत्र, रविवार और द्वितीया तिथि के योग से १. कृत्तिका, शनि और सप्तमी के योग से २. और शतभिषा, मंगलवार, और द्वादशी के योग से ३. इनमें जन्म लेने वाली कन्या विषकन्या होती है । अब ग्रहस्थितिवश द्वितीय योग कहते हैं—यदि जन्मकाल में दो शुभग्रह लग्न में हों और एक पाप दशम में तथा दो पापग्रह शत्रुक्षेत्र में हों तो विषकन्या योग होता है ॥ १ ॥

मन्दाश्लेषा द्वितीया यदि तदनु कुजे सप्तमी वारुणर्क्षे
द्वादश्यां च द्विदैवं दिनमणिदिवसे यज्जनिः सा विषाख्या।
धर्मस्थो भूमिसूनुस्तनुसदनगतः सूर्यसूनुस्तदानीं
मार्तण्डः सूनुयातो यदि जनिसमये सा कुमारी विषाख्या।२।

संस्कृत—यदि जनिसमये मन्दा, श्लेषा, द्वितीया, तदनु कुजे सप्तमी वारुणर्क्षे दिनमणिदिवसे द्वादश्यां द्विदेवं च यज्जनिः सा विषाख्या भवति। यदि भूमिसूनुः धर्मस्थः सूर्यसूनुः तनुसदनगतः' मार्त्तण्डः सूनुयातो तदानीं सा कुमारी विषाख्या भवति ॥ २ ॥

हिन्दी---जन्म समय में शनिवार, श्लेषानक्षत्र और द्वितीया तिथि हो, या मंगलवार, शतभिषानक्षत्र, और सप्तमी तिथि हो अथवा रविवार, विशाखानक्षत्र और द्वादशी तिथि हो तो विषकन्या योग बनता है। इनमें उत्पन्न कन्या विषकन्या होती हैं। अथवा जिस कन्या की कुण्डली में मंगल लग्न से नवम, शनि लग्न में और सूर्य पञ्चम में हों वह विषकन्या होती है॥ २॥

विषकन्यायोगपरिहारः—

लग्नादिन्दोः शुभो वा यदि मदनपतिर्द्यूनयायी विषाख्या।
दोषं चैवानपत्यं तदनु च नियतं हन्ति वैधव्यदोषम्।
इत्थं ज्ञेयं ग्रहज्ञैः सुमतिभिरखिलं योगजातं ग्रहाणा-
मार्यैरार्यानुमत्या मतमिह गदितं जातके जातकानाम्।

संस्कृत---जन्मलग्नात् वा इन्दोः (चन्द्रात्) यदि शुभः (शुभग्रहः) वा मदनपतिः (सप्तमेशः) द्यूनयायी (सप्तमभावगतः) भवति तदा विषाख्यादोषं, अनपत्यदोषं च तदनु नियतं वैधव्यदोषं च हन्ति। इत्थं, इह जातके–जातकानां आर्यानुमत्या ग्रहाणां योगजातं अखिलं मतं सुमतिभिः ग्रहज्ञैः गदितं ज्ञेयमिति।

हिन्दी---जिस कुण्डली में जन्मलग्न या चन्द्र से सप्तम स्थान में शुभग्रह हो या सप्तमेश हो तो उस कन्या का विषकन्या योग, सन्तानाभाव योग एवं वैधव्य योग दोषों को विनाश करते हैं। इस तरह जातक ग्रन्थ में श्रेष्ठ ज्योतिषशास्त्र वेत्ताओं की अनुमति से कथित ग्रहों के योग से उत्पन्न जातकों के सभी शुभाशुभ विचार ग्रहस्थितिवेत्ता बुद्धिमान् दैवज्ञ विचार करें॥ ३॥

विषकन्याध्यायोपसंहारः—

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मञ्जुलेऽस्मिन्।
कन्याध्यायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्युक्तो वह्निसंख्यैर्विषाख्यः ४

संस्कृत---स्पष्टम्।

हिन्दी---श्रीगणेश दैवज्ञ ने मनोहर पद्यों से रचित पण्डितों को प्रसन्न करने वाले इस सुन्दर जातकालङ्कार ग्रन्थ में तीन श्लोकों द्वारा विषकन्या योगाध्याय को निर्माण किया॥ ४॥

इति जातकालंकारे विषकन्या योगाध्यायः समाप्तः॥

अथ आयुर्दायाध्यायः

आयुर्दायस्य वैशिष्ट्यम्

**आयुर्मूलं जन्मिनां जीवनं च ह्याजीवानां निर्जराणां सुधेव ।
एवं प्राहुः पूर्वमाचार्यवर्यास्तमादायुर्दायमेनं प्रवक्ष्ये ॥ १ ॥**

संस्कृत—निर्जराणां (देवानां) सुधा इव हि आजीवानां जन्मिनां आयुर्मूलं जीवनमस्ति, एवं पूर्वं आचार्यवर्याः प्राहुः । तस्मात् एनं आयुर्दायं प्रवक्ष्ये ॥ १ ॥

हिन्दी—देवताओं के लिये जैसे अमृत है उसी तरह शरीरधारी प्राणियों का जीवनमूल आयु है । ऐसा पूर्व में प्राचीनाचार्यों ने कहा है अतः आयुर्दाय अध्याय को कहता हूँ ॥ १ ॥

दीर्घ-मध्यायुर्योगाः—

**लग्नाधीशोऽतिवीर्यो यदि शुभविहगैरीक्षितः केन्द्रयातै-
र्दद्यादायुः सुदीर्घं गुणगणसहितं श्रीयुतं मानवानाम् ।
सौम्याः केन्द्रालयस्था जनुषि च रजनीनायके स्वीयतुङ्गे
वीर्याढ्ये लग्ननाथे वपुषि च शरदां षष्टिरायुर्नराणाम् ॥ २ ॥**

संस्कृत—अतिवीर्यः लग्नाधीशः केन्द्रयातैः शुभग्रहैरीक्षितः, तदा मानवानां गुणगणसहितं श्रीयुतं सुदीर्घं आयुः दद्यात् । एवं जनुषि सौम्याः केन्द्रालयस्थाः स्वीयतुङ्गे रजनीनायके, वीर्याढ्ये लग्ननाथे वपुषि च तदा नराणां शरदां षष्टिरायुः स्यात् ॥ २ ॥

हिन्दी—जिसके जन्मसमय में पूर्णबली लग्नेश केन्द्र (१।४।७।१०) में स्थित शुभग्रह द्वारा देखे जाये तो वह गुण और सम्पत्ति से युत होकर दीर्घायु (६४ वर्ष से ऊपर) होता है । इसी तरह यदि लग्न से केन्द्र (१।४।७।१०) में शुभग्रह हों, चन्द्र अपनी उच्चराशि (वृष) में हो और बली लग्नेश लग्न में हो तो मनुष्य की आयु साठ वर्ष की होती है ॥ २ ॥

दीर्घायुर्योगाः—

सौम्याः केन्द्रालयस्था वपुषि सुरगुरौ लग्नतो वा सुधांशो-
रायुर्युक्तं न दृष्टं न च गगनगतैः सप्ततिर्वत्सराणाम् ।
याता मूलत्रिकोणे शुभगगनचराः स्वीयतुङ्गे सुरेज्ये
लग्नाधीशेऽतिवीर्ये गगनवसुसमातुल्यमायुर्नराणाम् ॥ ३ ॥

संस्कृत—लग्नतः वा सुधांशोः सौम्याः केन्द्रालयस्थाः सुरगुरौ वपुषि (लग्ने), गगनगतैः (ग्रहैः) आयुः (अष्टमस्थानं) न युक्तं न च दृष्टं, तदा वत्सराणां सप्ततिः, आयुः स्यात् । शुभगगनचराः मूलत्रिकोणे याताः, सुरेज्ये स्त्रीयतुङ्गे, लग्नाधीशे अतिवीर्ये सति नराणां गगनवसु (८०) समा तुल्यमायुः स्यादिति ॥३॥

हिन्दी—जन्मलग्न या चन्द्र से शुभग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) में हो, गुरु लग्न में और लग्न से अष्टमस्थान ग्रहों से युत या दृष्ट न हो तो मनुष्य की आयु सत्तर (७०) वर्ष की हो । यदि शुभग्रह अपने मूल त्रिकोण में हों, गुरु अपनी उच्चराशि (कर्क) में हो और लग्नेश पूर्णबली हो तो अस्सी (८०) वर्ष की आयु होती है ॥ ३ ॥

वि०—पं० हरभानुकृत सं० टीका में 'गगनगतैः' का अर्थ दशमस्थ ग्रह किया गया है जो समीचीन नहीं है, कारण दशमस्थ ग्रह की दृष्टि अष्टम स्थान पर न हो सकती अतः गगनगत का अर्थ ग्रह है । सूर्यादि ग्रहों के मूलत्रिकोण राशि क्रम से सिंह, वृष, मेष, कन्या, धनु, तुला, और कुम्भ राशि जानना चाहिये ॥ ३ ॥

अल्प-मध्य-दीर्घायुर्योगाः—

सौम्ये केन्द्रेऽतिदीर्घे यदि निधनपदं खेटहीनं समाः स्यु-
स्त्रिंशत्सौम्ये क्षितं चेद् गगनहिमकरैः संयुतोऽथ स्वभे चेत् ।
स्वत्र्यंशे चामरेज्ये मुनिनयनमितं स्वर्क्षगे लग्नगे वा
चन्द्रे द्यूने शुभश्चेद् गगनरसमितं कोणगाः सौम्यखेटाः ॥ ४ ॥

संस्कृत—अतिवीर्ये सौम्ये (बुधे) केन्द्रे सति, निधनपदं (अष्टमं) यदि खेटहीनं तदा त्रिंशत् समाः स्युः । चेत् सौम्ये क्षितं तदा गगनहिमकरैः (दशभिः) सहितं त्रिंशद् आयुः स्यात् । अथ चेद् अमरेज्ये (गुरौ) स्वभे स्वत्र्यंशे च तदा

मुनिनयनमितं (सप्तविंशत्) आयुः स्यात् । चन्द्रे स्वर्क्षगे वा लग्नगे शुभः चेत् द्यूने (सप्तमे) तदा गगनरसमितं (षष्टिमितं) आयुः स्यात् । सौम्यखेटाः कोणगाः तथा सुरेज्ये कीटे लग्ने यदि भवति तदा खाष्टतुल्यं (अशीतिः) आयुः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ ४ ॥

हिन्दी—बली बुध केन्द्र (१।४।७।१०) में हो और लग्न से अष्टम में कोई ग्रह न हो तो ३० वर्ष की आयु होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि अष्टम स्थान पर हो तो ४० वर्ष की आयु होती हैं एवं गुरु अपनी राशि (धनु, मीन) में या अपने द्रेष्काण में हो तो २७ वर्ष की, चन्द्र कर्कराशि में या लग्न में हो और शुभग्रह लग्न से सप्तम में हो तो ६० वर्ष की, यदि शुभग्रह ९।५ में हों और कर्क लग्न में गुरु हो तो मनुष्य की आयु ८० वर्ष की होती है ॥ ४ ॥

कीटे लग्ने सुरेज्ये यदि भवति तदा खाष्टतुल्यं लयेशो
धर्मेऽङ्गे चाङ्गनाथे निधनभवनगे क्रूरदृष्टेऽब्धिहस्ताः ।
लग्नाधीशाष्टनाथौ लयभवनगतौ सप्तविंशद्विलग्ने ।
क्रूरेज्यौ चन्द्रदृष्टौ यदि निधनगतः कश्चनास्ते द्विपक्षाः ॥५॥

संस्कृत—खाष्टतुल्यमित्यन्तस्य पूर्वेण सम्बन्धः । अथ लयेशः (अष्टमेशः) धर्मेऽङ्गे च क्रूरदृष्टे, अङ्गनाथे निधनभवनगते तदा अब्धिहस्ताः (चतुर्विंशतिः), आयुः स्यात् । लग्नाधीशाष्टनाथौ लयभवनगतौ चेत्तदा सप्तविंशत्, यदि चन्द्रदृष्टौ क्रूरेज्यौ विलग्ने, कश्चन निधनगत आस्ते तदा द्विपक्षाः (द्वाविंशतिः), आयुः स्यादिति ॥ ५ ॥

हिन्दी—अष्टमेश नवम या लग्न में हो और पापदृष्ट लग्नेश अष्टम में हो तो २४ वर्ष की, यदि लग्नेश और अष्टमेश अष्टमभाव में हो तो २७ वर्ष की, और चन्द्रदृष्ट पापयुत गुरु लग्न में हो तथा लग्न से अष्टम में कोई ग्रह न हो तो मनुष्य की आयु २२ वर्ष की होती है ॥ ५ ॥

वि०—पूर्वटीकाकार 'धर्मेऽङ्गे' का अर्थ केवल नवम भाव किये हैं जो विचारणीय है।

पूर्णायुर्योगाः—

लग्नेन्दू क्रूरहीनौ वपुषि सुरगुरौ रन्ध्रभं खेटहीनं
केन्द्रे सौम्ये खशैलाः सितविबुधगुरू स्याच्छतं केन्द्रगौ चेत् ।

वागीशे कर्कलग्ने शतमिह भृगुजे केन्द्रगेऽथार्कसूनौ।
धर्माङ्गस्थे सुधांशौ व्ययनवमगते हायनानां शतं स्यात् ॥६॥

संस्कृत—क्रूरहीनौ लग्नेन्दू, सुरगुरौ वपुषि (लग्ने), रन्ध्रभं खेटहीनं, सौम्ये केन्द्रे तदा खशैलाः (सप्ततिः) चेत् सितविबुधगुरू केन्द्रगौ तदा शतं स्यात्। वागीशे कर्कलग्ने भृगुजे केन्द्रगे तदा इह शतमायुः स्यात्। अथ अर्कसूनौ धर्माङ्गस्थे, सुधांशौ व्ययभवनगते सति हायनानां शतमायुः स्यात् ॥ ६ ॥

हिन्दी—लग्न और चन्द्र स्थान में पापग्रह न हो, गुरु लग्न में हो, अष्टम में कोई ग्रह न हो और बुध केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो ७० वर्ष की, यदि शुक्र और गुरु केन्द्र में हों तो १०० वर्ष की, इसी तरह यदि कर्क लग्न में गुरु और शुक्र केन्द्र में हो तो सौ वर्ष की, एवं शनि नवम या लग्न में हो और चन्द्र लग्न से द्वादश में हो तो मनुष्य की आयु सौ वर्ष की होती है ॥ ६ ॥

वि०—पूर्व टीकाकारों ने 'सौम्ये केन्द्रे' का अर्थ शुभग्रह केन्द्र में हो यह किया है परन्तु आगे इसी योग में शुक्र और गुरु केन्द्र में होने से सौ वर्ष की आयु कही गयी है। इस लिये सौम्य का अर्थ बुध होना उचित है। केन्द्रस्थ बुध में ७० और गुरु-शुक्र में सौवर्ष की आयु हो, यह युक्तिसंगत जान पड़ता है ॥ ६ ॥

धीकेन्द्रायुर्नवस्था यदि खलखचरा नो गुरोर्भे विलग्ने
केन्द्रे काव्ये गुरौ वा शुभमपि निधनं सौम्यदृष्टं शतं स्यात्।
लग्नादिन्दोर्न खेटा यदि निधनगता वीर्यभाजौ सितेज्यौ।
पूर्णायुः स्वीयराशौ शुभगगनचराः षष्टिरङ्गोच्चगेऽब्जे ॥७॥

संस्कृत—यदि खलखचराः धीकेन्द्रायुर्नवस्थाः न स्युः, तथा गुरोर्भे विलग्ने, काव्ये गुरौ वा केन्द्रे, निधनं शुभमपि च सौम्य-दृष्टे सति शतमायुः स्यात्। लग्नादिन्दोश्च यदि निधन-गता खेटा न, सितेज्यौ वीर्यभाजौ तदा पूर्णायुः स्यात्। यदि शुभगगनचराः स्वीयराशौ, अब्जे अंगोच्चगे तदा षष्टिरायुः स्यात् ॥ ७ ॥

हिन्दी—यदि लग्न से ५।१।४।७।१०।८।९ इन स्थानों में पापग्रह न हों तथा धन या मीन लग्न हो और शुक्र वा गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) में हो एवं अष्टम और नवम भाव पर शुभदृष्टि हो तो सौ वर्ष की आयु होती है। लग्न

और चन्द्र से अमष्ट में ग्रह न हों और शुक्र, गुरु वली हों तो पूर्णायु (१२० वर्ष) होती है। यदि शुभग्रह अपनी राशि में हों और वृषलग्न में चन्द्र हो तो ६० वर्ष की आयु होती है ॥ ७ ॥

अन्यान्यपरमायुर्योगाः—

कोदण्डान्त्यार्धमङ्गे यदि सकलखगाः स्वोच्चगा ज्ञे जिनांशै-
र्गोस्थे पूर्णं च केन्द्रे सुरपतिभृगुजौ लाभगेऽब्जे परायुः ।
शुक्रे मीने तनुस्थे निधनगृहगते सौम्यदृष्टे सुधांशौ
जीवे केन्द्रे शतं स्यादथ तनुगृहपे छिद्रगे पुष्करेऽब्जे ॥ ८ ॥

संस्कृत—यदि कोदण्डान्त्यार्धमङ्गं (धनुर्लग्नोत्तरार्धं), सकलखगाः (सर्वे ग्रहाः) स्वोच्चगाः, जिनांशैः (चतुर्विंशतिभिरंशैः) ज्ञे (वुधे), गोस्थे (वृषस्थे), तदा पूर्णमायुः स्यात् । एवं सुरपति-भृगुजौ केन्द्रे अब्जे (चन्द्रे) लाभगे तदा परायुः स्यात् । शुक्रे मीने तनुस्थे, सुधांशौ निधनगृहगते सौम्यदृष्टे, जीवे केन्द्रे तदा शतमायुः स्यात् । अथ तनुगृहपे छिद्रगे (अष्टमे) अब्जे पुष्करे (दशमे), वागीशे वीर्ययुक्ते, सर्वखेटाः (अन्ये ग्रहाः) नवमभवनगाः, तदा शतायुः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ ८ ॥

हिन्दी—यदि धनुराशि का उत्तरार्ध लग्न हो, वुध चौवीस अंश से वृष में हो और शेष सभी ग्रह अपनी उच्चराशि में हो तो पूर्णायु (१२० वर्ष) योग होता है। गुरु-शुक्र केन्द्र (१।४।७।१०) में हो और चन्द्रलग्न से एकादश स्थान में हो तो परायु (पूर्णायु) योग होता है। एवं मीनलग्न में शुक्र हो, शुभ दृष्ट चन्द्र अष्टम भाव में और गुरु केन्द्र में हो तो पूर्णायु योग सौ वर्ष का होता है। यदि लग्नेश अष्टम में, चन्द्र दशम में, गुरुवली हो और शेष ग्रह नवम भाव में हों तो सौ वर्ष की आयु होती है। (इसका सम्बन्ध अग्रिम श्लोक से है) ॥ ८ ॥

वागीशे वीर्ययुक्ते नवमभवनगाः सर्वखेटाः शतायुः
कर्केऽङ्गे जीवचन्द्रौ सहजरिपुभवे सत्कविज्ञौ च केन्द्रे ।
केन्द्रे सूर्यारमन्दा गुरुनवलवगा वाक्पतौ लग्नयाते
व्यष्टस्थानेषु शेषाः शरगजतुलितं स्यान्नराणां तदाऽऽयुः ॥९॥

संस्कृत—अत्र शतायु:पर्यन्तस्य पूर्वश्लोकेन सम्बन्धः। कर्केऽङ्गे (कर्कलग्ने), जीवचन्द्रौ सहजरिपुभवे, सत्कवीज्ञौ च केन्द्रे तदा शतायुः स्यात्। सूर्यारमन्दाः गुरुनवलवगाः (गुरुनवांशगताः) केन्द्रे, वाक्पतौ लग्नयाते सति, शेषाः व्यष्टस्थानेषु (अष्टमरहित-स्थानेषु) स्थिताः तदा नराणां शरगजतुलितं (पञ्चाशीतिवर्षमितं) आयुः स्यात् ॥ ९ ॥

हिन्दी—(श्लोक का प्रथमचरण पूर्वश्लोक से सम्बन्धित है)। यदि जन्मकाल में कर्कलग्न हो, गुरु और चन्द्र ३।६।११ में हों और शुक्र-बुध केन्द्र (१।४।७।१०) में हों तो सौ वर्ष की आयु होती है। रवि, मंगल और शनि गुरु के नवमांश में होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हों, गुरुलग्न में और शेषग्रह अष्टम से भिन्न स्थानों में हों तो मनुष्य की आयु ८५ वर्ष की होती है ॥ ९ ॥

क्रूराः सौम्यांशयाता उपचयगृहगाः कातराः कण्टकस्थाः
सौम्या व्योमार्कसंख्यं यदि तनुपकुजौ रन्ध्रगौ नो परायुः।
केन्द्रे लग्नेशजीवौ नवसुतनिधने कण्टके नो खलाख्याः
संपूर्णं पापखेटा यदि गुरुजलगा जीवभावे च सौम्याः ॥१०॥

संस्कृत—क्रूराः सौम्यांशयाताः (शुभनवांशस्थाः), उपचयगृहगाः (त्रिषट्दशमैकादशगताः), कातराः (पराजिताः), सौम्याः कण्टकस्थाः (केन्द्रस्थाः), यदि तनुप-कुजौ रन्ध्रगौ न तदा व्योमार्कसंख्यं (विंशत्यधिकशतं), परायुः स्यात्। लग्नेशजीवौ केन्द्रे, खलाख्याः (पापाः) नवसुतनिधने कण्टके न स्युः, तदा सम्पूर्णमायुः स्यात्। यदि पापखेटाः गुरुजलगाः (नवमचतुर्थगताः) सौम्याः जीव-भागे (गुरुनवांशे) तदा जातकः सर्व-सम्पत्तिमान् स्यादित्यस्याग्रिमेण सम्बन्धः ॥ १० ॥

हिन्दी—पापग्रह शुभग्रह की नवमांश में होकर उपचय (३।६।१०।११) स्थानों में हों और कातर याने पराजित हों, शुभग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) में और लग्नेश तथा मंगल अष्टम स्थान में न हों तो १२० वर्ष की आयु हो। लग्नेश और गुरु यदि केन्द्र (१।४।७।१०) में हों और पापग्रह ९।५।८। और केन्द्र में न हों तो पूर्णायु होती है। यदि पापग्रह लग्न से ४।९ में हों और शुभग्रह गुरु की नवमांश में हो तो जातक सर्वसम्पत्तियुक्त शतायु होता है। (इसका सम्बन्ध अग्रिम श्लोक से है) ॥ १० ॥

पूर्णायुः तथा अल्पायुर्योगाः—

युग्मर्क्षांशं गता वा व्ययधनगृहगाश्चेच्छुभाः शीतभानुः
संपूर्णो लग्नयायी शतमिह जनिनामिन्दिरामन्दिरं स्यात् ।
लग्नेशे सौम्ययुक्ते वपुषि च लयपे रन्ध्रगे नान्यदृष्टे
विंशत्केन्द्रे लयेशे बलवियुजि तथा लग्नपे त्रिंशदायुः ॥११॥

संस्कृत—(पापाश्चतुर्थनवमगताः सौम्याः) युग्मर्क्षांशे गता वा चेत् शुभाः व्ययनिधनगृहगाः, सम्पूर्णः शीतभानुः (चन्द्रः) लग्नयायी स्यात्तदा इह (अस्मिन् योगे) जनिमान् इन्दिरामन्दिरं (सम्पत्तियुक्त) शतमायुः स्यात् । यदि सौम्ययुक्ते लग्नेशे वपुषि (लग्ने), लयपे (अष्टमेशे) रन्ध्रगे अन्यदृष्टेन तदा विंशद्वर्षमितमायुः स्यात् । बलवियुजि (निर्बले) लयेशे तथा लग्नपे केन्द्रे चेत् तदा त्रिंशदायुः स्यादिति ॥ ११ ॥

हिन्दी—(पूर्वश्लोक से सम्बन्धित)—यदि पापग्रह ४।९ में हों, शुभग्रह गुरुनवमांश में अथवा समराशि की नवमांश में रहकर १२।८ में हों और पूर्णचन्द्र लग्न में हो तो इस योग में उत्पन्न पुरुष सर्वसम्पत्ति से युक्त सौ वर्ष की आयु प्राप्त करता है । यदि शुभग्रह के साथ लग्न का स्वामी लग्न में हो, अष्टमेश अष्टम में हो और उसे कोई ग्रह देखता न हो तो २० वर्ष की आयु हो । निर्बल अष्टमेश और लग्नेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हों तो जातक की आयु ३० वर्ष की होती है ॥ ११ ॥

अत्यल्पायुर्योगाः—

इन्दावापोक्लिमस्थे तदनु तनुपतौ निर्बले पापदृष्टे
दन्तैस्तुल्यं ततोऽर्कः खलखगविवरे लग्नगोऽब्जत्रिसंख्यम् ।
रिःफे केन्द्रे सुरेज्ये गुरुरिपुसहजे स्यात् सपापेऽङ्गनाथे ।
रामाब्दं कर्कलग्ने कुजतुहिनकरौ केन्द्ररन्ध्रे ग्रहोनम् ॥१२॥

संस्कृत—निर्बले इन्दौ तदनु तनुपतौ पापदृष्टे आपोक्लिमस्थे तदा दन्तैः (द्वात्रिंशद्वर्षैः), तुल्यमायुः स्यात् । ततः खलखगविवरे (पापमध्ये) लग्नगतः अर्कश्चेत्तदा अब्जत्रिसंख्यं (एकत्रिंशद्वर्षमितं) आयुः स्यात् । यदि सुरेज्ये केन्द्रे

रि:फे वा, सपापे अङ्गनाथे गुरुरिपुसहजे (नवषष्ठतृतीये) सति रामाब्दं आयुः स्यात् । कुजतुहिनकरौ कर्कलग्ने, (ग्रहोनं ग्रहरहितं) केन्द्ररन्ध्रं चेत्तदा रामाब्दमित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ १२ ॥

हिन्दी—निर्बल चन्द्र और लग्नेश पापदृष्ट होकर आपोक्लिम (३।६।९।१२) में हों तो ३२ वर्ष की आयु होती है । यदि पापग्रह के बीच होकर लग्न में हो तो ३१ वर्ष की, गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) में या १२ में हो और पापयुत लग्नेश ९।६।३ में हो तो ३ वर्ष की, एवं कर्क लग्न में मंगल, चन्द्र हों तथा केन्द्र और अष्टम में कोई ग्रह न हो तो ३ वर्ष की आयु होती है ॥ १२ ॥

रामाब्दं स्याल्लयेशे वपुषि च निधनं सौम्यहीनं खवेदा
लग्नेशो रन्ध्रयातो वपुषि निधनपः स्यान्नृणां बाणसंख्यम् ।
नक्रे तिग्मांशुमन्दौ सहजरिपुगतौ कण्टके रन्ध्रनाथे
पारावाराब्धिसंख्यं तदनु शुभखगाः सल्लवर्क्षेऽत्र खाग्निः१३

संस्कृत—रामाब्दमित्यस्य पूर्वेण सम्बन्धः । लयेशे वपुषि (लग्ने), सौम्यहीनं च भवेत्तदा खवेदाः (चत्वारिंशद्वर्षाणि) आयुः स्यात् । लग्नेशः रन्ध्रगतः, निधनपः वपुषि चेत्तदा नृणां बाणसंख्यं आयुः स्यात् । यदि तिग्मांशुमन्दौ (रविशनी) नक्रे (मकरे) सहजरिपुगतौ भवतस्तथा रन्ध्रनाथे कण्टके (केन्द्रे) तदा पारावाराब्धिसंख्यं (४४ वर्षमितं) आयुः स्यात् । तदनु शुभखगाः सल्लवर्क्षे (शुभनवमांशे) सति, अत्र (अस्मिन् योगे) खाग्निः (३० वर्षमितं) आयुः स्यात् ॥ १३ ॥

हिन्दी—अष्टमेश लग्न में हो और अष्टम स्थान में शुभग्रह न हो तो ४० वर्ष की, लग्नेश अष्टम में और अष्टमेश लग्न में हो तो ५ वर्ष की, रवि और शनि मकर राशि में होकर लग्न से ३।६ में हों तथा अष्टमेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो ४४ वर्ष की और यदि शुभग्रह शुभनवमांश में हो तो ३० वर्ष की आयु होती है ॥ १३ ॥

दीर्घ-मध्य-अल्पायुर्योगाः—

क्रूरैर्दृष्टेऽङ्गनाथे यदि शुभविहगा वीर्यवन्तः सुधांशौ
संस्थे सौम्ये गणे चेद् गुणमुनितुलितं रन्ध्रगैर्मध्यमायुः ।

स्याच्चन्द्राद्दहि पापैरथ तपनसुते द्व्यङ्गलग्ने हि याते
रिःफेशे रन्ध्रनाथे यदि बलरहिते कङ्कपत्राक्षिसंख्यम् ॥ १४ ॥

संस्कृति—अङ्गनाथे क्रूरैः दृष्टे सति, शुभग्रहाः यदि वीर्यवन्तः, सुधांशौ सौम्येगणे (शुभवर्गे) संस्थे चेत्तदा गुणमुनितुलितं (त्रिसप्ततिवर्षं) आयुः स्यात् । यदि चन्द्रात् रन्ध्रगैः पापैः, तथा अह्नि (दिवसे जन्म) भवेत्तदा मध्यमायुः स्यात् । अथ तपनसुते (शनैश्चरे) द्व्यङ्गलग्ने याते सति यदि रिःफनाथे (द्वादशेशे), रन्ध्रनाथे बलरहिते तदा, हि (निश्चयेन) कङ्कपत्राक्षिसंख्यं (पञ्चविंशतिवर्षं) आयुः स्यात् ॥ १४ ॥

हिन्दी—जिसके जन्म काल में पाप दृष्ट लग्नेश हो, बली शुभग्रह हो और शुभग्रह के वर्ग में चन्द्र हो तो उसकी आयु ७३ वर्ष को होती है। यदि चन्द्र से अष्टम में पापग्रह हों और दिन का जन्म हो तो मनुष्य मध्यायु होता है। शनि द्विस्वभाव (३।६।९।१२) राशि के लग्न में हो और द्वादशेश तथा अष्टमेश निर्बल हों तो निश्चय मनुष्य की आयु २५ वर्ष की होती है ॥ १४ ॥

कर्केऽङ्गे सप्तसप्तौ खलविहगयुते पुष्करस्थे द्विजेशे
केन्द्रे याते सुरेज्ये शरविशिखमितं पुष्करे नीरगे वा ।
सौम्ये पीयूषभानौ व्ययनिधनगते देहगे वा कवीज्या
वेकर्क्षे व्योमबाणैर्व्ययरिपुनिधने लग्ननाथाढ्यचन्द्रे ॥१५॥

संस्कृत—खलविहगयुते सप्तसप्तौ (सूर्ये), कर्केऽङ्गे (कर्कलग्ने) द्विजेशे (चन्द्रे) पुष्करस्थे (दशमस्थे), सुरेज्ये केन्द्रे याते सति शरविशिखमितं (५५ वर्षमितं) आयुः स्यात् । अथ सौम्ये (बुधे) पुष्करे (दशमे), वा नीरगे (चतुर्थे), पीयूषभानौ (चन्द्रे) व्ययनिधनगते वा देहगे (लग्ने), कवीज्यौ एकर्क्षे सति तदा व्योमबाणैः समं (५० वर्षमितं) आयुः स्यात् । लग्ननाथाढ्यचन्द्रे (लग्नेशयुतचन्द्रे), व्ययरिपुनिधने, लग्ननाथः शन्यंशे तदा भुजगशरमितं (५८ वर्षतुल्यं) आयुः स्यादित्यग्रिमेण सम्बन्धः ॥ १५ ॥

हिन्दी—पाप ग्रह के साथ सूर्य कर्क लग्न में, चन्द्र दशम में और गुरु केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो ५५ वर्ष, बुध १० या ४ में, चन्द्र १२।८ वा लग्न में और गुरु-शुक्र दोनों एक राशि में हों तो ५० वर्ष, यदि लग्नेश के साथ

चन्द्र १२।६।८ में हो और लग्नेश शनि के नवमांश में हो तो ५८ वर्ष की आयु होती है। इसका सम्वन्ध अग्रिम श्लोक से है॥ १५॥

शन्यंशे लग्ननाथे भुजगशरमितं स्यादथो सौम्यखेटा
रन्ध्रोना देहनाथो व्ययरिपुनिधने पापयुक् षष्टिरायुः।
राशीशो लग्ननाथो दिनमणिसहितो मृत्युगो वाक्पतिश्चे-
न्नो केन्द्रे षष्टिरायुर्वपुषि दिनपतिः शत्रुभौमान्वितश्चेत् ॥१६॥

संस्कृत—अत्र भुजगशरमितं स्यादित्यन्तावधि पूर्वेण संवन्धः। अथ सौम्यखेटाः रन्ध्रोनाः (अष्टमरहिताः) पापयुक् देहनाथः (लग्नेशः) व्ययरिपुनिधने पष्टिरायुः (षष्टिवर्षमितं) स्यात्। दिनमणिसहितः राशीशः (जन्मराश्याधिपः) लग्ननाथश्च मृत्युगे (अष्टमस्थे), चेद् वाक्पतिः केन्द्रे न तदा षष्टिरायुः स्यात्। शत्रुभौमान्वितः दिनपतिः चेद् वपुषि (लग्ने), ततोऽग्रिमेण सम्वन्धः—वागीशे हीनवीर्ये यामिनीशे (चन्द्रे) व्ययतनुजगते (द्वादशपञ्चमे) सति खशैलाः (सप्ततिवर्षाणि) आयुः स्यात्॥ १६॥

हिन्दी—शुभ ग्रह लग्न से अष्टम भाव में न हों, और पापग्रह के साथ लग्नेश, द्वादश, षष्ठ और अष्ठम स्थानों में हो तो साठ (६०) वर्ष, एवं सूर्य के साथ जन्मराशि का स्वामी और लग्नेश अष्ठम में हो और केन्द्र (१।४।७।१०) में यदि गुरु न होवे तो साठ वर्ष, यदि अपने शत्रुग्रह और मंगल के साथ सूर्य लग्न में पड़े, (इसके वाद अग्रिम श्लोक से सम्वन्ध है) गुरु वलहीन और चन्द्रमा लग्न से द्वादश या पञ्चम में हो तो सत्तर (७०) वर्ष की आयु होती है॥ १६॥

वागीशे हीनवीर्ये व्ययतनुजगते यामिनीशे खशैला
धर्मे सर्वैः परायुः खलखगलवगैः केन्द्रयातैरशीतिः।
क्रूरैः क्रूरर्क्षतातैः शुभभवनगतैः सौम्यखेटैः सवीर्ये
लग्नेशे स्यात् परायुः सुतभवनगतैः षष्टिरायुर्नराणाम् ॥१७॥

संस्कृत—अत्र 'खशैला' पर्यन्तस्य पूर्वश्लोकेन सम्वन्वः। सर्वैः (ग्रहैः) धर्मे (नवमे) स्थितश्चेत्परायुः स्यात्। एवं सर्वैः खलखगलवगैः (पापग्रहन-

वांशगतैः) केन्द्रयातैस्तदा अशीतिवर्षाण्यायुः स्यात् । क्रूरैः क्रूरर्क्षयातैः (अशुभराशिस्थैः) सौम्यखेटैः शुभभवनगतैः सवीर्ये लग्नेशे सति परमायुः स्यात् । यदि सर्वैः सुतभवनगतैस्तदा नराणां षष्टिरायुः स्यात् ॥ १७ ॥

हिन्दी—इस श्लोक की प्रथम पंक्ति का सम्बन्ध पूर्व श्लोक से है । जिसके जन्म समय में सभी ग्रह लग्न से नवम भाव में हो तो वह परमायु अर्थात् १२० वर्ष की उमरवाला होता है । यदि सभी ग्रह पापग्रह की नवांश में होकर केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो अस्सी वर्ष, यदि पापग्रह अशुभराशियों में हों और शुभग्रह शुभ राशियों में हों और लग्नेश बलवान् हो तो परमायु (१२०) वर्ष, यदि सभी ग्रह लग्न से पञ्चम भाव में हों तो मनुष्य की आयु साठ वर्ष की होती है ॥ १७ ॥

सारङ्गस्यान्त्यभागे यदि वपुषि गते चाद्यभागे च केन्द्रे
सौम्यैः खेटैः शतं स्याद्वसुसहजसुखे स्याच्चिरायुः समस्तैः ।
लग्नात् प्रालेयभानोर्निधनसदनपे रिःफकेन्द्रेऽष्टविंशत्
केन्द्रे सौम्यग्रहोने यदि मृतिभवने कश्चिदास्ते खराभाः ।।१८।

संस्कृत—यदि सारङ्गस्यान्त्यभागे (पापस्यान्तिमनवांशे) वपुषि (लग्ने) गते, सौम्यैः खेटैः आद्यभागे (प्रथमनवांशे) केन्द्रे च स्थितैः तदा शतमायुः स्यात् । समस्तैः (ग्रहैः) वसुसहजसुखे (अष्टमतृतीयचतुर्थे) तदा चिरायुः स्यात् । अथ लग्नाद्वा प्रालेयभानोः (चन्द्रात्) निधनसदनपे (अष्टमेशे) रिःफकेन्द्रे (द्वादशे केन्द्रे च) तदा अष्टाविंशदायुः स्यात् । यदि सौम्यग्रहोने केन्द्रे (शुभग्रहरहितकेन्द्रे) मृतिभवने (अष्टमे) कश्चिद् (ग्रहः) आस्ते तदा खरामास्त्रिंशद्वर्षाण्यायुः स्यात् ॥ १८ ॥

हिन्दी—यदि जन्मलग्न में धनराशि का अन्तिम नवांश हो और शुभ ग्रह केन्द्र (१।४।७।१०) राशि के प्रथम नवांश में हों तो पुरुष की आयु सौ वर्ष की हो । सूर्य से शनिपर्यन्त सभी ग्रह लग्न से अष्टम, तृतीय और चतुर्थ में हो तो दीर्घायु योग होता है । लग्न से अथवा चन्द्र से अष्टमभाव का स्वामी यदि बारहवें एवं केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो २८ वर्ष की आयु हो । शुभ ग्रह केन्द्र में न हों और अष्टमभाव में कोई ग्रह हो तो तीस वर्ष की आयु होती है ॥ १८ ॥

क्षीणे प्रालेयभानौ यदि खलखचरो मृत्युगो मृत्युनाथः
केन्द्रस्थो लग्ननाथो निजबलरहितः खाश्वितुल्यं तदायुः ।
सौम्यैरापोक्लिमस्थैर्दिनमणिजविधू वैरिरन्ध्रालयस्थौ
तुल्यं कामाङ्कुशैः स्यादथ धनमृतिगौ रिःफगौ पापखेटौ १९

संस्कृत—प्रालेयभानौ (चन्द्रे) क्षीणे (सति) खलखचरः (पापः) मृत्युगः (अष्टमस्थः), यदि मृत्युनाथः (अष्टमेशः) केन्द्रस्थः निजबलरहितः लग्ननाथश्चेत्तदा खाश्वितुल्यं (विंशद्वर्षमितं) आयुः स्यात् । सौम्यैः (शुभैः) आपोक्लिमस्थैः दिनमणिजविधू (शनिचन्द्रौ) । वैरिरन्ध्रालयस्थौ (षष्ठाष्टम गतौ) तदा कामाङ्कुशैः (नखैः) तुल्यमायुः स्यात् । अथ पापखेटौ धनमृतिगौ रिःफगौ (द्वितीयाष्टमद्वादशस्थौ) ततोऽग्रिमश्लोकेन सम्बन्धः—यदि हिममहसा (चन्द्रेण) वा स्वर्भानुना (राहुणा) हीनौ तदा व्योमनेत्रप्रमाणं (विंशतिसंख्यं) आयुः स्यात् ॥ १९ ॥

हिन्दी—चन्द्रमा क्षीण बली हो, पापग्रह अष्टम में हो, अष्टमेश केन्द्र (१।४।७।१०) में हो और लग्नेश निर्बल हो तो बीस वर्ष की आयु होती है । यदि शुभग्रह आपोक्लीम (३।६।९।१२) में हो, और शनि एवं चन्द्रमा छठे और आठवें में हो तो बीस वर्ष की आयु होती है । यदि दो पापग्रह लग्न से द्वितीय, अष्टम और द्वादश भाव में हों (बाद में अग्रिम से सम्बन्ध है) और राहु तथा चन्द्र से युक्त न हो तो बीस वर्ष को आयु होती है ॥ १९ ॥

हीनौ स्वर्भानुना वा यदि हिममहसा व्योमनेत्रप्रमाणं
केन्द्रस्थौ सूर्यमन्दौ यदि वपुषि कुजः पुष्पबाणाङ्कुशं स्यात् ।
शुक्रेज्यावङ्गयातौ तनयभवनगौ भौमपापावनायु-
र्जन्मेशः सार्कलग्ने खलशुभसहितश्चेक्षितः स्यादनायुः ॥२०॥

संस्कृत—अस्य प्रथमचरणस्य पूर्वश्लोकेन सम्बन्धः । यदि सूर्यमन्दौ केन्द्रस्थौ, कुजः वपुषि (लग्ने), तदा पुष्पबाणाङ्कुशं (विंशद्वर्षमितं) आयुः स्यात् । शुक्रेज्यौ अङ्गयातौ (लग्नगतौ), भौमपापौ तनयभवनगौ (सुतभावगतौ) तदा अनायुः (अल्पायुः) स्यात् । यदि जन्मेशः (जन्मराशीशः) सार्कलग्ने (सूर्ययुतलग्ने) खलशुभसहितः इक्षितश्च तदा अनायुः स्यात् ॥ २० ॥

हिन्दी—इस श्लोक का प्रथम चरण पूर्व श्लोक से सम्बन्धित है। यदि सूर्य और शनि केन्द्र (१।४।७।१०) में हों, मंगल लग्न में हो तो बीस वर्ष की आयु हो। लग्न में शुक्र गुरु हों और किसी पापग्रह के साथ मंगल लग्न से पञ्चम भाव में हों तो अल्पायु हो। सूर्य के साथ यदि जन्म राशि का स्वामी लग्न में हो तो वह अल्पायु होता है ॥ २० ॥

आयुर्दायाधिकारिकथनम्—

यत्संप्रोक्तं योगजं पूर्वमायुर्होरापारावारपारङ्गमज्ञैः ।
तस्मादायुः सारभूतं यदेतत्पुण्याचारश्लोकभाजां नराणाम् २१

संस्कृत—पूर्वं यत् योगजं (योगजातं) आयुः, होरापारावारपारङ्गमज्ञैः सम्प्रोक्तं, तस्मात्सारभूतं यदेतदायुस्तत्पुण्याचारश्लोकभाजां नराणां घटते ॥२१॥

हिन्दी—पहले योग के अनुसार आयु का विचार जो ज्योतिष शास्त्र रूप समुद्र से उत्तीर्ण हुये मुनियों ने कहा है, उसका सारभूत जो यह आयुर्दा विचार, सो सदाचारी, धर्मात्मा और यशभागी मनुष्यों को ही घटता है अन्य को नहीं, अर्थात् योगजायु के अधिकारी यम नियम आदि को पालन करने वाले सदाचारी मनुष्य होते हैं, उन्हीं को उक्त योगानुसार आयु मिलती है, दुराचारियों को नहीं।

फलादेशकथनप्रकारः—

बलाबलविवेकेन पुष्करालयशालिनाम् ।
सुमनोभिरिदं देश्यमायुर्धर्मादिशालिनाम् ॥ २२ ॥

संस्कृत—पुष्करालयशालिनां (सूर्यादिग्रहाणां) बलाबलविवेकेन सुमनोभिः इदमायुः धर्मादिशालिनां देश्यमादेश्यमिति ॥ २२ ॥

हिन्दी—सूर्यादि ग्रहों का बलाबल विचार कर ज्योतिषियों को इस योगज आयुर्दाय का आदेश धर्मशीला व्यक्ति को करना चाहिए ॥ २२ ॥

आयुर्दायाध्यायोपसंहारः—

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मंजुलेऽस्मिन् ।
आयुर्दायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्युक्तो बाहुपक्षैः प्रणीतः ॥२३॥

संस्कृत—स्पष्टम् ।

हिन्दी—श्री गणेश दैवज्ञ ने मनोहर पद्यों से रचित विद्वानों को आनन्द देने वाले इस जातकालंकार नामक ग्रन्थ में सुन्दर छन्द से युक्त बाईस श्लोकों द्वारा आयुर्दायाध्याय बनाया है ॥ २३ ॥

इति जातकालङ्कारे पंचमो आयुर्दायाध्यायः समाप्तः ।

अथ व्यत्यस्थभावफलाध्यायः

लग्नेश-धनेश-स्थानफलम्—

लग्नाधीशेऽर्थगे चेद्धनभवनपतौ लग्नयातेऽर्थवान् स्याद्
बुद्ध्याचारप्रवीणः परमसुकृतकृत् सारभृद्भोगशीलः ।
भ्रातृस्थानेऽङ्गनाथे सहजभवनपे लग्नयातेऽल्पशक्तिः
सद्बंधू राजपूज्यः कुलजनसुखदो मातृपक्षेण युक्तः ॥ १ ॥

संस्कृत—चेद् लग्नाधीशे अर्थगे (द्वितीयस्थे) धनभवनपतौ लग्नयाते (सति जातकः) अर्थवान् बुद्ध्याचारप्रवीणः, परमसुकृतकृत्, सारभृद्भोगशीलश्च स्यात् । अङ्गनाथे (लग्नेशे) भ्रातृस्थाने, सहजभवनपे लग्नयाते सति अल्पशक्तिः, सद्बन्धुः, राजपूज्यः, कुलजनसुखदः, मातृपक्षेण युक्तश्च स्यात् ॥ १ ॥

हिन्दी—यदि लग्नेश धन भाव में हो और धनेश लग्न में हो तो मनुष्य धनी, बुद्धिमान्, आचार में निपुण, उत्तम पुण्य कार्य करने वाला, वली और भोगी होता है । लग्नेश तृतीय भाव में हो और तृतीय भाव का स्वामी लग्न में हो तो मनुष्य अल्पशक्तिवान्, उत्तम बन्धुवाला, राजमान्य, अपने कुलजन को सुख देने वाला और मातृपक्ष से युक्त अर्थात् मातृसुख से युक्त होता है ॥ १ ॥

तुर्येशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ तुर्यगे स्यात् क्षमावान्
ताताज्ञाराजकार्यप्रगुणमतियुतः सद्गुरुः स्वीयपक्षः ।
लग्नस्थे सूनुनाथे तनुजपदगते लग्ननाथे मनस्वी
विद्यालंकारयुक्तो निजकुलविदितो ज्ञानवान् मानसक्तः ॥२॥

संस्कृत—तुर्येशे (चतुर्थेशे) लग्नयाते सति तदनु तनुपतौ तुर्यगे (चतुर्थे) तदा क्षमावान् ताताज्ञाराजकार्यप्रगुणमतियुतः (पितुरादेशे राजकार्ये च प्रकृष्ट-गुणबुद्धियुक्तः), सद्गुरुः स्वीयपक्षश्च स्यात् । सूनुनाथे (पञ्चमेशे) लग्नस्थे, लग्नाथे तनुजपदगते (सति मनुष्यः) मनस्वी, विद्यालङ्कारयुक्तः, निजकुल-विदितः ज्ञानवान् मानसक्तश्च स्यात् ॥ २ ॥

हिन्दी—लग्न से चतुर्थ स्थान का स्वामी लग्न में हो और लग्नेश चतुर्थ में हो तो मनुष्य क्षमाशील, पिता की आज्ञा में और राजकार्य में उत्तम गुण युक्त बुद्धिवाला (अर्थात् पिता की आज्ञा में रहने वाला और राजकार्य को अच्छी तरह चलाने वाला) सज्जनों का गुरु, और अपने पक्ष में स्थिर रहने वाला होता है। यदि पञ्चमेश लग्न में हो और लग्नेश पञ्चम में हो तो मनुष्य मनस्वी, विशिष्ट विद्वान्, अपने कुल में श्रेष्ठ, ज्ञानी और आत्माभिमानी होता है॥ २॥

षष्ठेशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ षष्ठगे व्याधिहीनो
नित्यं द्रोहादिसक्तो वपुषि सबलवान्द्रव्यवान्संग्रही स्यात्।
मूर्तीशे कामयाते मदनसदनपे मूर्तिगे तातसेवी
लोलस्वान्तोऽङ्गनायां भवति हि मनुजः सेवकः शालकस्य ३

संस्कृत—षष्ठेशे लग्नयाते सति तदनु तनुपतौ षष्ठगे तदा व्याधिहीनः, नित्यं द्रोहादिसक्तः, वपुषि सबलवान्, द्रव्यवान्, संग्रही च स्यात्। मूर्तीशे (लग्नेशे) कामयाते (सप्तमस्थे), मदनसदनपे मूर्तिगे तदा मनुजः तातसेवी, अङ्गनायां लोलासक्तः, हि शालकस्य सेवकश्च भवति॥ ३॥

हिन्दी—षष्ठेश लग्न में हो और लग्नेश षष्ठ में हो तो मनुष्य रोगहीन, द्रोहादिकार्य में आसक्त, बलवान्, धनी और संग्रह करने वाला होता है। यदि लग्न का स्वामी सप्तम भाव में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो मनुष्य पितृ-सेवक, स्त्रियों में चञ्चल आसक्ति रखने वाला और साले की सेवा करने वाला अर्थात् उसके अधीन रहने वाला होता है॥ ३॥

अङ्गेशे रन्ध्रयाते निधनगृहपतावङ्गे द्यूतबुद्धिः
शूरश्चौर्यादिसक्तो निधनपदमियाद्भूपतेर्लोकतो वा।
देहाधीशे शुभस्थे शुभभवनपतौ देहसंस्थे विदेशी
धर्मासक्तो नितान्तं सुरगुरुभजने तत्परो राजमान्यः॥ ४॥

संस्कृत—अङ्गेशे रन्ध्रयाते (अष्टमस्थे), निधनगृहपतौ अङ्गगे (लग्नयाते) सति द्यूतबुद्धिः, शूरः, चौर्यादिसक्तः, भूपतेः वा लोकतः निधनपदमियात्। अथ

देहाधीशे (लग्नेशे) शुभस्थे (नवमस्थे), शुभभवनपतौ (नवमेशे) देहसंस्थे (लग्ने) सति तदा जातकः विदेशी, धर्मासक्तः, नितान्तं सुरगुरुभजने तत्परः राजमान्यश्च स्यात् ॥ ४ ॥

हिन्दी—लग्न का स्वामी अष्टम भाव में और अष्टम का स्वामी लग्न में हो तो जातक जुवाड़ी, पराक्रमी, चोरी आदि कार्य में प्रवीण और राजा अथवा जनता द्वारा मृत्यु पाने वाला होता है।

यदि लग्न का स्वामी नवम भाव में और नवम का स्वामी लग्न में हो तो मनुष्य परदेश में विशेष रहने वाला, धार्मिक, देवता और गुरुजनों का नितान्त सेवक और राजमान्य होता है ॥ ४ ॥

कर्मस्थे लग्ननाथे गगनभवनपे लग्नगे भूपतिः स्यात्
ख्यातो लाभे च रूपे गुरुभजनरतो लोलुपो द्रव्यनाथः ।
लाभेशे लग्नयाते तनुभवनपतौ लाभसंस्थे सुकर्मा
दीर्घायुः क्षोणिनाथः शुभविभवयुतः कोविदो मानवः स्यात् ।५।

संस्कृत—लग्ननाथे कर्मस्थे (दशमस्थे), गगनभवनपे (दशमेशे) लग्नगे, तदा मनुष्यः भूपतिः, लाभे, रूपे च ख्यातः, गुरुभजनरतः, लोलुपः, द्रव्यनाथश्च स्यात्। लाभेशे लग्नयाते, तनुभवनपतौ (लग्नेशे) लाभसंस्थे तदा मानवः सुकर्मा, दीर्घायुः, क्षोणिनाथः, शुभविभवयुक्तः, कोविदश्चस्यात् ॥ ५ ॥

हिन्दी—लग्न का स्वामी दशम भाव में और दशम स्थान का स्वामी लग्न में हो तो मनुष्य राजा, लाभ एवं रूप में विख्यात, गुरुजन का सेवक, चञ्चल स्वभाववाला और द्रव्याधीश होता है। यदि लग्न से ग्यारहवें घर का स्वामी लग्न में और लग्नेश एग्यारहवें में हो तो मनुष्य सुकर्म करने वाला, दीर्घायु, पृथ्वीपालक, सुन्दर ऐश्वर्य से युक्त और विद्वान् होता है ॥ ५ ॥

लग्नेशे रिःफयाते व्ययसदनपतौ लग्नगे सर्वशत्रु-
र्बुद्ध्या हीनो नितान्तं कृपणतरमतिर्द्रव्यनाशी विलोलः ।
इत्थं तातादिकानामपि जनुषि तथा खेचराणां हि योगाद्
द्राच्यं होरागमज्ञैस्तदनु तनुपयुग् भार्गवे राजपूज्यः ॥६॥

संस्कृत—लग्नेशे रिःफयाते (द्वादशस्थे) व्ययसदनपतौ (द्वादशेशे) लग्नगे सति तदा मनुष्यः सर्वशत्रुः, बुद्धयाहीनः, नितान्तं कृपणतरमतिः, द्रव्यनाशी, विलोलश्च स्यात् । इत्थं जनुषि खेचराणां हि योगात् तातादिकानामपि तथा फलं होरागमज्ञैः वाच्यम् । तदनु तनुपयुग्भार्गवे सति राजपूज्यः स्यात् ॥६॥

हिन्दी—लग्न का स्वामी लग्न से बारहवें स्थान में और द्वादशेश लग्न में हो तो मनुष्य सभी का शत्रु, बुद्धिहीन, अत्यन्त कृपण बुद्धिवाला, धन को नष्ट करने वाला, और चञ्चल होता है । इस तरह जन्मकाल में ग्रहों के योग से पिता आदि का भी वैसा फल ज्योतिषी का कहना चाहिए । भाव यह है कि जिसका जो भाव है उसका वह लग्न मानकर उससे द्वितीय, तृतीय, चतुर्थादि स्थानों का धनभावादि मानकर उक्त रीति से शुभाशुभ फल विचारना चाहिए । जैसे पञ्चमभाव पुत्र का, सप्तम स्त्री का, दशम पिता का, चतुर्थ माता एवं मित्र का, तृतीय भ्राता और छठा शत्रु का स्थान है । अतः लग्न से चतुर्थ भाव माता का मानकर उसके बाद क्रम से अन्य धन आदि भावों की कल्पनाकर फलादेश करना चाहिए । इसी तरह पिता आदि का भी जानना चाहिए ॥६॥

ग्रन्थकारोक्तिः—

एवं स्वमत्या सुफलप्रबोधं श्रीजातकालङ्करणं मनोज्ञम् ।
वृत्तैरनन्तेशमितैर्निबद्धं मया मुदे दैवविदामुदारम् ॥ ७ ॥

संस्कृत—एवं मया (गणेशदैवज्ञेन) सुमत्या उदारं (सारनिरूपणं) मनोज्ञं सुफलप्रबोधं (स्पष्टफलोत्पादकं) श्री जातकालंकरणं अनन्तेशमितैः (दशाधिक शत संख्यकैः) वृत्तैः (श्लोकैः) दैवविदां मुदे निबद्धम् ॥ ७ ॥

हिन्दी—मैं श्री गणेश ज्योतिषी ने अपनी बुद्धि के अनुसार जातक शास्त्र का सारभूत, मनोहर, स्पष्ट फलबोधक "जातकालंकार" नामक ग्रन्थ को एकसौ दश श्लोकों द्वारा ज्योतिषियों के प्रसन्नार्थ बनाया ॥ ७ ॥

पुष्करालयवशा गुणसारा जातकोक्तिरमलेव मराला ।
संस्कृता विहरतां भवतां मे मानसेऽतिसरले सुकवीनाम् ॥८॥

संस्कृत—पुष्करालयवशा गुणसारा संस्कृता अमला मराला इव मे जातकोक्तिः भवतां सुकवीनां अतिसरले मानसे विहरताम् ॥ ८ ॥

हिन्दी—ग्रन्थकार सुकवियों से प्रार्थना करते हैं कि पुष्करालयावशा याने मानसरोवर के अधीन रहने वाली, प्रसिद्ध गुणों से युक्ता, संस्कृता और निर्मला हंसी के समान मेरी यह जातकोक्ति जो "पुष्करालयावशा" (ग्रहों के अधीन रहने वाली), गुणसारा (जातकगुणों के सारभूता), संस्कृता (परिष्कृता) और अमला (दोषरहिता) है वह परमादरणीय सुकविजनों के अत्यन्त सरल हृदय रूप सरोवर में विहार करे ॥ ८ ॥

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मञ्जुलेऽस्मिन् ।
भावाध्यायः श्रीगणेशेन वर्यैर्वृत्तैर्युक्तोऽष्टाभिरेष प्रणीतः ॥९॥

संस्कृत—स्पष्टम् ।

हिन्दी—श्री गणेश ज्योतिषी ने मनोहर पद्यों से रचित, पण्डितों को आनन्दप्रद, सुन्दर इस "जातकालंकार" नामक ग्रन्थ में आठ श्लोकों में इस भावाध्याय को बनाया ॥ ९ ॥

इति जातकालंकारे षष्ठः व्यत्यस्थभावफलाध्यायः समाप्तः ।

अथ वंशाध्यायः

ग्रन्थकारवंशपरिचयः—

अभूदवनिमण्डले गणकमण्डलाखण्डलः
श्रुतिस्मृतिविहारभूर्विबुधमण्डलीमण्डनम् ।
प्रचण्डगुणगुर्जराधिपसभाप्रभातप्रभः
कवीन्द्रकुलभूषणो जगति कान्हजी कोविदः ॥ १ ॥

भारद्वाजकुले बभूव परमं तस्मात् सुतानां त्रयं
ज्यायांस्तेष्वभवद् ग्रहज्ञतिलकः श्रीसूर्यदासः सुधीः ।
श्रीमान् सर्वकलानिधिस्तदनुजो गोपालनामाऽभ-
च्छ्रीमद्दैवविदांवरस्तदनुजः श्रीरामकृष्णोऽभवत् ॥ २ ॥

संस्कृत—स्पष्टम् ॥ १–२ ॥

हिन्दी—इस धरातल पर दैवज्ञों में श्रेष्ठ, श्रुति और स्मृति के निरन्तर चिन्तन करने से उन दोनों का विहारार्थ आधारस्वरूप, विद्वानों का अलंकरण, शत्रुनाशक प्रचण्डगुण से युक्त गुर्जरदेशाधिप नरेश की सभा को प्रकाश करने वाले एवं श्रेष्ठ कविकुलभूषण भारद्वाज मुनि के वंश में कान्हजी नाम से विख्यात पण्डित हुए । उनके उत्कृष्ट तीन पुत्र हुए । उनमें ज्येष्ठ ज्योतिषियों में श्रेष्ठ श्री सूर्यदास नामक पण्डित, द्वितीय सर्वकलाकुशल श्रीमान् गोपाल नामक पंडित और इन दोनों का अनुज (छोटाभाई) श्रेष्ठ गणक श्री रामकृष्ण नामक पण्डित हुए ॥ १–२ ॥

शाके मार्गणरामसायकधरा संख्ये नभस्ये तथा
मासे ब्रध्नपुरे सुजातकमिदं चक्रे गणेशः सुधीः ।
छन्दोलंकृतिकाव्यनाटककलाभिज्ञः शिवाध्यापकः
तत्र श्रीशिवविन्मुदे गणितभूर्गोपालसूनुः स्वयम् ॥३॥

ये पठिष्यन्ति दैवज्ञास्तेषामायुः सुखं शिवम् ।
भूयात् कैरवकुन्दाभा सुकीर्तिः सर्वतो दिशम् ॥ ४ ॥

संस्कृत—स्पष्टम् ॥३-४ ॥

हिन्दी—गणित सिद्धान्त के आश्रय अर्थात् जाननेवाले छन्द, अलंकार, काव्य, नाटक तथा कला के ज्ञाता श्री शिवपण्डित के शिष्य श्री गोपाल पण्डित के पुत्र श्री गणेश पण्डित ने अपने गुरु श्री शिवपण्डित को प्रसन्न करने के लिये १५३५ शाके के भाद्रपद महीने में श्री सूर्यपुर ग्राम में इस जातकालंकार नामक ग्रन्थ को बनाया। जो ज्योतिषी इसको पढ़ेंगे उन्हें आयु, सुख और कल्याण प्राप्त होंगे, तथा कुन्दफूल के समान स्वच्छ उनका यश सभी दिशाओं में फैलेगा ॥ ३-४ ॥

हृद्यैः पद्यैर्गुम्फिते सूरितोषेऽलङ्काराख्ये जातके मञ्जुलेऽस्मिन् ।
वंशाध्यायः श्रीगणेशेन वृत्तैर्युक्तो वेदैः सैकसंख्यैः प्रणीतः ५

इति श्रीगणेशदैवज्ञविरचिते जातकालंकारे वंशाध्यायः समाप्तः ।

संस्कृत—स्पष्टम् ॥ ५ ॥

हिन्दी—श्रीगणेश कवि ने मनोरम पद्यों से रचित, विद्वान् को आनन्द देनेवाले इस सुन्दर 'जातकालंकार' नामक ग्रन्थ में पांच श्लोकों द्वारा वंशाध्याय को बनाया ॥ ५ ॥

नवांकनागभूतुल्ये शकाब्दे मेषगे रवौ । वैद्यनाथप्रसादेन टीकेऽयं पूर्णतां गता ॥

इति दरभंगामण्डलान्तर्गत 'हिरणीं' ग्रामनिवासि श्रीवैद्यनाथधामस्थ-वैद्यनाथकमल-कुमारीसंस्कृतविद्यालय-प्रधानाध्यापक-ज्योतिषाद्यनेकाचार्योपाधिविभूषित-पं० श्रीलषणलाल झाशर्म-कृतसयुक्तिक-सोदाहरण-तत्त्वप्रकाशिका-संस्कृत-हिन्दीटीकोपेतः जातकालंकारः समाप्तः ।

॥ श्रीवैद्यनाथार्पणमस्तु ॥

अस्मत्प्रकाशित ज्यौतिषग्रन्थाः—

बृहज्जातकम् । 'विमला' हिन्दीटीकोपेतम्	१०—००
ताजिकनीलकण्ठी । गंगाधरमिश्रकृत 'जलदगर्जना' सं० हि० टीका	१५—००
व्यावहारिकज्यौतिषतत्त्वम् । 'तत्त्वप्रभा' हिन्दी टीका सहित	१२—००
वास्तुरत्नाकरः अहिबलचक्रसहितः । हिन्दी टीका सहित	१२—००
जातकाभरणम् । सपरिशिष्ट 'वमिला' हिन्दी टीका सहित	१४—००
रमलनवरत्नम् । 'विमला' हिन्दी टीका, रेखाचित्र सहित	७—००
शीघ्रबोधः । 'सरला' हिन्दी टीका सहित	३—००
मुहूर्तचिन्तामणिः । सविमर्शं 'मणिप्रभा' हिन्दी टीका सहित	१०—००
वास्तुरत्नावली । 'सुबोधिनी' संस्कृत हिन्दी टीका सहित	४—००
प्रश्नभूषणम् । विमला-सरला संस्कृत हिन्दी व्याख्योपेतम्	३—५०
लघुपाराशरी-मध्यपाराशरी । सोदाहरण-'सुबोधिनी' सं० हि० टीका	३—००
रेखागणितम् । ११—१ . अध्यायौ, श्रीसुधाकरद्विवेदि विरचितम्	३—००
सरलरेखागणितम् । १—२ अध्यायौ, विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदिकृतम्	२—००
महामृत्युञ्जयपञ्चांगम् । संपादक दैवज्ञ मातृप्रसाद पाण्डेय	२—००
दुर्गापञ्चांगम् । संपादक दैवज्ञ मातृप्रसाद पाण्डेय	२—००
पञ्चांगविज्ञानम् । हिन्दी टीका सहित	१—००
ग्रहगोचरफलम् । 'शशुतोषणी' हिन्दी टीका सहित	१—००
बृहद् होडाचक्रविवरणम् । हिन्दी टीका । पं० मुरलीधर ठक्कुर	१—५०
चलनकलन-प्रश्नोत्तरविवरणम् । सं० पं० अच्युतानन्द झा	२—००
वनमाला । 'अमृतधारा' हिन्दी टीका सहित	१—००
षट्पञ्चाशिका । विभा संस्कृत-हिन्दी टीका सहित	१—००
लग्नरत्नाकरः । सान्वय 'शिशुबोधिनी' हिन्दी टीका सहित	१—५०
चमत्कारचिन्तामणिः । सान्वय—'भावप्रबोधिनी' हिन्दी टीका सहित	१—००
गौरीजातकम् । 'विमला' हिन्दी टीका सहित	०—७५
गोलपरिभाषा । 'तत्त्वप्रकाशिका' हिन्दी टीका सहित	०—७५
योगिनीजातकः । विमला हिन्दी टीका सहित	०—७५
धराचक्रम् । 'सुबोधिनी' हिन्दी टीका सहित	०—५०
पद्मकोशः । भावबोधिनी हिन्दी टीका सहित	०—७५
गणितीयकोषः । (गणितीय परिभाषा और शब्दावली)	१५—००

प्राप्तिस्थान—चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी—२२१००१